॥२१७॥

॥रामकथा॥

मोरारिबापू

मानस-हनुमानचालीसा (गोवा)

जो यह पढ़ै हनुमान चालीसा। होय सिद्धि साखी गौरीसा ॥
तुलसीदास सदा हरि चेरा। किजै नाथ हृदय महँ डेरा ॥

१. 'हनुमान चालीसा' तत्त्वत: रामकथा का भाष्य है ।
२. जीभ जब हरिनाम लेती है तो जीभ पर दशावतार होता है ।
३. 'हनुमानचालीसा'का अनुसंधान आदमी को युगबंधन से मुक्त करता है ।
४. नाम–रसायन आदमी को स्वकेन्द्र से विश्वकेन्द्र की यात्रा कराता है ।
५. राम–रसायन है 'रामचरित मानस' ।
६. नाम सर्वश्रेष्ठ राम–रसायन है ।
७. इक्कीसवीं सदी में शाप नहीं होना चाहिए, समाज को सावधान करना चाहिए ।
८. राम–रसायन शुद्ध का उद्धारक है, अशुद्ध का विनाशक है ।
९. सदा दास होना एक बहुत बड़ी उपलब्धि है ।

|| **रामकथा** ||
मानस-हनुमानचालीसा

मोरारिबापू

गोवा

दिनांक : ११-०४-२०१५ से १९-०४-२०१५

कथा-क्रमांक : ७७५

प्रकाशन :
अप्रैल, २०१६

प्रकाशक

श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट

© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक

नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

राम-कथा पुस्तक प्राप्ति

सम्पर्क-सूत्र :
ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स

स्वर अेनिम्स

प्रेम-पियाला

'मानस-हनुमानचालीसा' भाग-१० रामकथा का गान मोरारिबापू ने दिनांक ११-४-२०१५ से १९-४-२०१५ दरमियान गोवा में किया। सुविदित है कि 'हनुमानचालीसा' को केन्द्र में रखकर ग्यारह रामकथा गाने का बापू का मनोरथ है। इस शृंखला में यह दसवीं कथा सम्पन्न हुई।

'हनुमानचालीसा' को रामकथा का भाष्य कहते हुए बापू का निवेदन रहा कि जैसे वेदों का भाष्य उपनिषद है; उपनिषद का भाष्य है 'भगवद्गीता'; 'भगवद्गीता' का भाष्य माना जाता है 'रामचरित मानस।' और मैं विनम्रता से ये कहना चाहूंगा कि 'रामचरित मानस' का भाष्य है 'सुन्दरकांड।' 'सुन्दरकांड' का भाष्य है 'हनुमानचालीसा।' 'हनुमानचालीसा' असल में रामकथा है। 'हनुमानचालीसा' तत्त्वत: रामकथा का भाष्य है।

'हनुमानचालीसा' का महिमागान करते हुए बापू का कहना हुआ कि 'हनुमानचालीसा' को जो आत्मसात् करता है वो सतयुगी नहीं रहता; वो त्रेतायुगी नहीं रहता; वो द्वापरयुगी नहीं रहता; वो कलियुगी नहीं रहता; वो केवल कथायुगी रह जाता है; केवल प्रेमयुगी रह जाता है। 'हनुमानचालीसा' का अनुसंधान आदमी को युगबंधन से मुक्त करता है।

बापू ने 'रामचरित मानस' को राम-रसायन का दर्जा भी दिया और कहा कि राम-रसायन में धर्म-रसायन, भक्ति-रसायन, नाम-रसायन, काम-रसायन जैसे ओर चारों रसायन भी निहित है, समाहित है।

'मानस' के सात कांड में जिन प्रधान व्यक्ति ने ज्यादा राम-रसायन पाया है उसका निर्देश करते हुए बापू ने कहा कि 'बालकांड' में सब से ज्यादा राम-रसायन अहल्या ने पीया है। 'अयोध्याकांड' में विशेष राम-रसायन प्राप्त किया है भरतजी ने। 'अरण्यकांड' में शबरी ने। 'किष्किन्धाकांड' में स्वयं रसायनशास्त्र के आचार्य हनुमानजी महाराज राम-रसायन में डूबे हैं। 'लंकाकांड' में एकमात्र आदमी है राम-रसायन को प्राप्त करनेवाला वो लंकेश रावण है। 'उत्तरकांड' में राम-रसायन प्राप्त किया बाबा कागभुशुंडि ने।

'नाम सर्वश्रेष्ठ रसायन है।' ऐसा सूत्रपात करते हुए बापू ने कहा कि नाम का रसायन पीनेवाला शुरूआत में स्वकेन्द्री रहेगा। बाद में वो स्वकेन्द्री आदमी स्वजनकेन्द्री बनेगा। फ़िर समाजकेन्द्री बनेगा और अंत में नाम-रसायन आदमी को विश्वकेन्द्री बनायेगा। नाम-रसायन आदमी को स्वकेन्द्र से विश्वकेन्द्र की यात्रा कराता है।

'मानस-हनुमानचालीसा' की दसवीं कथा अंतर्गत मोरारिबापू ने 'रामचरित मानस' के आधार पर हनुमंत-चरित्र का दर्शन करते-करते 'हनुमान चालीसा' का विशेष रूप में गायन किया।

-नीतिन वडगामा

मानस-हनुमानचालीसा :: १ ::

'हनुमान चालीसा' तत्त्वत: रामकथा का भाष्य है

जो यह पढ़ै हनुमान चालीसा। होय सिद्धि साखी गौरीसा ।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा। किजै नाथ हृदय महँ डेरा ।।

बाप! फ़िर एक बार लम्बे अंतराल के बाद इस भूमि पर रामकथा गाने का अवसर प्राप्त हुआ उसकी बड़ी प्रसन्नता है। सब से पहले भगवान परशुराम की आवेशावतार की चेतना को प्रणाम करते हुए फ़िर गोवा प्रदेश के महामहिम राज्यपाल आदरणीया परम विदुषी और गाती हुई गवर्नर महोदया को बहुत आदर के साथ नमन। उसके बाद इस रामकथा के केवल, केवल और केवल निमित्तमात्र यजमान किशोरभाई और उनका समग्र परिवार। बाप, बहुत-बहुत साधुवाद। और फिर आप सभी मेरे श्रावक भाई-बहन, विज्ञान के सदुपयोग के कारण कई देशों में सुनी जा रही ये रामकथा के सभी श्रोता भाई-बहन और अन्य सभी को व्यासपीठ पर से मेरा प्रणाम।

मैं बहुत-बहुत धन्यवाद व्यक्त करता हूं कि आप (गवर्नर महोदया), आप की व्यस्तता से रामकथा के प्रति आप की प्रीति को उजागर करने के लिए यहां पधारें। मैं एक बात ओर भी कहना चाहूंगा कि आप ने हमें निमंत्रण भी दिया, बापू, गोवा में कोई होटल में क्यों ठहरे? 'गवर्नर हाउस' में क्यों नहीं? ये आप का औदार्य है, आप का बड़प्पन है। आप इन दिनों में यहां होंगे तो जरूर चाय पीने के लिए आ जाउंगा। आप ने कहा कि मैंने सीता की आत्मकथा लिखी 'सीता पुनि बोली।' मुझे ये शीर्षक बहुत अच्छा लगा! आप तो शायद उपकरण बने, बोली तो शायद सीता ही होगी। और आप ने अभी फ़रमाया कि मुझे पूछा गया कि जानकीजी ने राम को माफ़ किया की नहीं? और आप ने माँ से पूछा। और माँ ने कहा कि मुझे पता नहीं। जानकी पृथ्वी में समा गई। सीता का अनुत्तर धरती में समा जाना; और हम सब जानते हैं, धरती स्वयं क्षमा है। तो मैं ये आप की इस किताब का स्वागत करता हूं। मैं पढ़ूंगा।

बाप, गोवा में इस रामकथा में निर्णय पर नहीं था कि कौन विषय केन्द्र में रखकर मैं 'मानस' गान करूं?

लेकिन जहां बहुत पहाड़ होते हैं, वृक्ष होते हैं, समंदर होता है, प्राकृतिक सौन्दर्य अधिक होता है वहां मेरे भीतर मनोरथ जगता है कि मैं 'हनुमान चालीसा' पर कुछ विशेष कहूं। मेरे श्रोता जानते हैं कि 'हनुमान चालीसा' पर सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा गुरुकृपा से करते हुए नव कथाएं तो हो चुकी है। ये दशवीं कथा है। और आप जानते हैं, मुझे यदि परमात्मा ने अवसर दिया तो ग्यारह बार 'हनुमान चालीसा' पर चर्चा करनी है। ग्यारहवीं बार तलगाजरडा में करेंगे।

ये 'मानस-हनुमान चालीसा' पार्ट-दश। 'रामचरित मानस' के आधार पर हनुमंत-चरित्र का दर्शन करते-करते हम 'हनुमान चालीसा' का विशेष गायन करेंगे। इससे हमारे आंतरिक प्रकाश में शायद वृद्धि हो। और हम विशेष रूप में अपनी इस देहनगर में बसी जानकी को खोज पाये। तुलसी ने लंका को देहनगर कहा है।

आप जानते हैं, माँ जानकी ने अपना ऐश्वर्य 'मानस' में नहीं दिखाया। एक जो उसको लीला करनी थी मनुष्यरूप में, जो कुछ संदेश विश्व को देना था उसी में वो रही। लेकिन दो जगह, ये मिथिला का प्रभाव दिखता है कि वो ऐश्वर्य को दिखाये बिना 'मानस' में रह नहीं पाई। वहां वो केवल जनकनंदिनी नहीं लेकिन परम आह्लादिनी शक्ति है, पराम्बा है। एक तो आप जानते हैं, जानकीजी ने अपना पहली बार ऐश्वर्य दिखाया जनकपुर में महाराजा दशरथजी जब बारात लेकर आये। अयोध्या की तुलना में जनकपुर शायद छोटा रहा हो। अवध से इतनी बड़ी बारात लेकर महाराज दशरथजी आये हैं। और कहीं मिथिला में उसका योग्य सम्मान न हुआ तो सीयाजू को लगा ये ठीक नहीं होगा। इसीलिए सीया ने अपनी महिमा वहां प्रगट की है। यद्यपि मिथिला कोई कम नहीं है। गोस्वामीजी कहते हैं-

पुर नर नारि सुभग सुचि संता ।
धरमशील ग्यानी गुनवंता ।।

लेकिन सीयाजू ने वहां जो ऐश्वर्य दिखाया! सब को आश्चर्य हुआ कि ये कैसे हुआ? लेकिन ये महिमा केवल राम के सिवा कोई नहीं जान पाया। और उसका हेतु भी ठाकुरजी ने पहचाना।

दूसरा प्रसंग आता है, चित्रकूट में सीयाजू है। चौदह साल का वनवास है। और जब अयोध्या से भरतजी पूरी अवध को लेकर चित्रकूट राम को मनाने के लिए आते हैं उस समय जानकी ने एक बार फ़िर अपना ऐश्वर्य दिखाया। यद्यपि ये चर्चा का विषय है कि महाराज दशरथजी को कितनी रानियां थी? कोई कहते हैं तीन सौ सांठ, कोई कहते हैं सात सौ। गोस्वामीजी इस अंक में नहीं गये 'मानस' में। वो तो कहते हैं-

दसरथ राउ सहित सब रानी ।

क्योंकि तुलसी का शास्त्र विवाद का नहीं है, संवाद का शास्त्र है। और विश्व को बहुत जरूरत है संवाद की। जन-जन को, परिवार-परिवार को, प्रांत-प्रांत को, राष्ट्र-राष्ट्र को संवाद करना चाहिए।

मेरे पास भी जब ये प्रश्न आता है कि सीया की अग्नि परीक्षा क्यों? दूसरी बार पुनः एक बार निष्कासन क्यों? कुछ प्रश्न पूछे गये फ़िर भी तुलसी ने टाल दिये क्योंकि अपवाद-विवाद और दुर्वाद जिसमें है वो प्रसंग को दूर से प्रणाम करते हुए वो संवाद स्थापित करना चाहते हैं। और जब संवाद की रचना आती है तो कई लोगों के मुंह और चिढ़ते हैं!

फांसले ओर मुंह चढ़ाये रहते हैं,
मैं जब कभी दूरियां मिटाता हूं।
आप जिस पर यकीन रखते हो,
वो सख्स कौन है, बताता हूं।

मेरे भाई-बहन, ये संवाद का शास्त्र है। इसीलिए कितनी रानियां है? क्या है, क्या है? बहुधा गोस्वामीजी उसमें 'मानस' में नहीं प्रवेश करते हैं। लेकिन मैं आप से निवेदन करना चाहता हूं कि माँ जानकी ने फ़िर चित्रकूट में-

सीय सासु प्रति बेष बनाई ।

जानकी ने जितनी सास थी इतने और मुझे कहने दो, मुनि-पत्नीओं के लिए भी सीयाजू ने एक-एक वेश बनाया था। और सब की सेवा में जानकीजी लगी हैं। तो ये दूसरा ऐश्वर्य मेरी दृष्टि में 'मानस' में आया है।

तो मेरे भाई-बहन, इस कथा में गुरुकृपा से जो प्रवाह चलेगा, मैं आप के सामने हनुमानजी को केन्द्र में रखते हुए, 'हनुमान चालीसा' को केन्द्र में रखकर 'मानस' के आधार पर कुछ संवाद के रूप में आप से बातें करूंगा। मैंने बहुत बार कहा है, मैं फिर दोहरा रहा हूं कि मेरी व्यासपीठ के पास उपदेश नहीं है। क्योंकि उपदेश की हमारी औकात नहीं है। आदेश मैं दे नहीं सकता। केवल 'मानस' का संवादी संदेश है, वो हम साथ में मिलकर नव दिन उसके बारे में बातें करेंगे।

'हनुमान चालीसा' सिद्ध भी है और शुद्ध भी है। हनुमानजी शिव के अवतार है। 'वानराकार विग्रह पुरारी।' हम सब जानते हैं। और शिव से चालीस वस्तु जुड़ी हुई है। एक तो शिव के पंचमुख है।

बिकट बेश मुख पंच पुरारी ।

और पांच मुख के एक-एक के तीन-तीन नेत्र, तो पंद्रह नेत्र है। हमारी सात्त्विक श्रद्धा अथवा तो गुणातीत श्रद्धा बारह ज्योतिर्लिंग की वंदना करना है। और शिव को भारतीय शास्त्रों ने अष्टमूर्ति कहा है। पंद्रह नेत्र, पांच मुख, बारह ज्योतिर्लिंग और इस अष्ट मूर्ति को जोड़ दिया जाय तो चालीस होता है। 'हनुमान चालीसा' में संकेतों में, प्रतीक में, इशारो में, अदाओं में शिव की चालीस बातें छिपी हुई है। मेरी इच्छा है कि हम आगे-आगे ग्यारहवीं कथा जब करेंगे तब तक ये-ये बात की भी हम चर्चा करें। बाकी हनुमानजी से चालीस का अंक बहुत जुड़ा हुआ है। उसकी भी संवाद के रूप में हम चर्चा करेंगे। तो ये थी छोटी-सी भूमिका।

रामकथा जब आरंभ होती है, एक प्रवाही परंपरा कायम है कि सद्ग्रंथ का परिचय दिया जाय। जिसको माहात्म्य कहते हैं। मैं हर वक्त दोहराता हूं, पुनरुक्ति दोष है। फिर भी 'मानस' से कौन अनभिज्ञ है कि उसका परिचय दिया जाय? कहते हैं, वेदों का भाष्य उपनिषद है। मैंने संतों से सुना है, उपनिषदों का भाष्य है 'भगवद् गीता।' 'भगवद् गीता' का भाष्य संतों ने माना है 'रामचरित मानस।' आगे मेरी व्यासपीठ चले तो मैं विनम्रता से ये कहना चाहूंगा कि 'रामचरित मानस' का भाष्य है 'सुन्दरकांड।' 'सुन्दरकांड' का भाष्य है 'हनुमान चालीसा।' 'हनुमान चालीसा' असल में रामकथा है। इसीलिए तो आरंभ में तुलसी 'अयोध्याकांड' के आरंभ का दोहा 'हनुमान चालीसा' में अंकित करते हैं-

श्री गुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि ।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु जो दायकु फल चारि ।।

'हनुमान चालीसा' तत्त्वतः रामकथा का भाष्य है। कितने प्रसंगों को समाये हुए 'हनुमान चालीसा' है!

तो मेरे भाई-बहन, ये जो सद्ग्रंथ है उसके बारे में कोई अनभिज्ञ नहीं है। दुनिया की कितनी भाषाओं में 'रामायण' कहां-कहां गई है उसका इतिहास, इतिहासविदों से सुनकर हम राजी होते हैं। ऐसी रामकथा, सात सोपान में उसको तुलसी ने संजोया है। तुलसी 'कांड' नहीं कहते हैं, 'सोपान' कहते हैं। हम सब जानते हैं, 'बाल', 'अयोध्या', 'अरण्य', किष्किन्धा', 'सुन्दर', 'लंका' और 'उत्तर।'

तुलसीदासजी जहां-जहां अंक में बात करते हैं वहां भी बड़ा आध्यात्मिक संकेत रखते हैं। ये सात सोपान एक अंक तो है सात का। और आप जानते हैं कि 'रामचरित मानस' का प्रथम सोपान जब आरंभ होता है तो सात मंत्र लिखे हैं। तुलसी का सात का अंक, तुलसी का नव का अंक तो अतिशय प्रिय है, आप जानते हैं। एक बहुत बड़ा आध्यात्मिक अंकशास्त्र समाया हुआ है 'मानस' में। उसकी बिलग से चर्चा होनी चाहिए।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।
भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यंति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ।।

नव वंदना है सात मंत्रों में। सरस्वती, गणेश, शिव, माँ भवानी, बोधमय विग्रह गुरु, वाल्मीकि, श्री हनुमानजी और सीता और राम। भारत अद्भुत है। भारत विश्वगुरु है। उसके बिना ऐसी ऊंचाई चाहे विचारों की

पकड़ो तो भी मिलना मुश्किल है। नव का अंक बहुत संकेत करता है। सरस्वती, गणेश, शिव, पार्वती चार उपर है। चार इधर है वाल्मीकि, हनुमानजी, जानकीजी, ठाकुर। बहुत महत्त्व की व्यक्ति होती है उसको हम केन्द्र में बिठाते हैं। जो चीफ़ है, परम आदरणीय है उसको हम बीच में रखते हैं। उपर चार वंदना, इधर चार वंदना, बीच में गुरुवंदना। तुलसी का संकेत है। गुरु केन्द्र में होता है। चाहे सरस्वती को समझना है, गणेश को समझना है, शिव को समझना है, पार्वती को समझना है। इधर सीता-रामजी और उधर वाल्मीकि लेकिन-

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम् ।

उसको केन्द्र में रख दिया ये बड़ा प्यारा लगता है। तुलसी को श्लोक को लोक तक पहुंचाना था। और तुलसी ने ये अद्‌भुत कर्म किया। महिमावंत बातों केवल एक गौरवमयी भाषा में केवल आबद्ध न हो जाय इसीलिए इस परम देवगिरा को आदर देते हुए, प्रणाम करते हुए, श्लोक को लोक तक उतारने का बहुत बड़ा सत्कर्म तुलसी ने किया। जैसे कबीरसाहब ने किया था। महावीर ने किया था। और हेतु था 'स्वान्तः सुखाय' अथवा तो 'मोरें मन प्रबोध जेहिं होई।' अथवा तो -

निज गिरा पावनि करन कारन राम जसु तुलसीं कह्यो।

श्लोक को सीधा लोक में उतारा; लोकबोली में। तुलसी चाहते हैं श्लोक को लोक में उतारा जाय। और पांच सोरठे में जगद्‌गुरु आदि शंकराचार्य की पंचदेवों की जो सनातनीय परंपरा है उसको सेतु कर रहे हैं। गणेश, सूर्य, शिव, दुर्गा, विष्णु।

मेरे देश के युवान भाई-बहन, मैं भी आप से प्रार्थना करूं, इन पांचों को स्मरण में रखना। गणेश की पूजा-वंदना हम गणेश चतुर्थी को करते हैं लेकिन गणेश है विवेक का देवता। सूक्ष्म रूप में मेरे देश का युवक-युवती विवेक को बरकरार रखे, निरंतर गणेश पूजा है। हमारा विवेक अक्षुण्ण रहे। गुरुदत्त विवेक, सत्संग प्रगट विवेक हमारा बना रहे। ये गणेशपूजा है। मंदिर में, घर में गणेश की प्रतिमा, मूर्ति की पूजा तो करनी ही चाहिए, जैसी जिसकी श्रद्धा। सूर्यपूजा; हम अर्घ्य देते हैं सूर्य को। लेकिन कम से कम उजाले में जीने का संकल्प ये सूर्यपूजा है। जहां तक संभव हो, हम प्रकाश में जीने की कोशिश करें ये सूर्यपूजा है। विष्णु ये व्यापकता का पर्याय है। हमारा हृदय विशाल हो, संकीर्ण न हो। उदार दिल, उदार विचारधारा, 'उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुंबकम्', ये जो हमारी उद्‌घोषणा है ये विष्णुपूजा है।

भगवान शिव का अभिषेक, विश्वास बनाये रखना वो शिव-अभिषेक है। शिव है विश्वास का प्रतीक। धर्म का जो मूल है उस पर विश्वास बनाये रखना। तथाकथित धर्म चलित होते हैं। 'रामचरित मानस' में विश्वास की जितनी परिभाषायें है, मेरा तो इतना ही कहना है कि इधर-उधर विश्वास रखने के बजाय जो साक्षात् विश्वास है उस पर विश्वास करना, बस। और विश्वास है शंकर।

भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।

विश्वास परम वस्तु है; शिव है। विश्वास पर विश्वास करना, बस। अपनी जीवन की पात्रता पर विश्वास करना कि मेरी आंख बराबर काम कर रही है। किसी की निंदा होती है तो मुझे रुचि नहीं होती है। मेरा हाथ गलत कार्यों में जाता नहीं है। मेरा पैर गलत राह पे चलता नहीं है। परवीन शाकिर का शे'र है-

मुझ को इस राह पर चलना ही नहीं,
जो मुझे तुझ से जुदा करती है।

और दूसरे के कल्याण में जीना शिव तत्त्व है। और दुर्गा श्रद्धा का रूप है। अंधश्रद्धा नहीं; लेकिन आख़िर में गुणातीत श्रद्धा ये पार्वती है। पांचवें सोरठें में आप जानते हैं-

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

गुरु वंदना है। गुरु की बात आई तो तुलसी का सिर झुक गया। केन्द्र की बात आई तो सिर झुक गया। और तुलसी यहां स्पष्ट लिखते हैं कि सब से खतरनाक चीज़ हमारे में हो तो वो है मोह। और तुलसी 'मानस' के गुरुवंदना के आरंभ में कहते हैं, ये मोह जायेगा किसी बुद्धपुरुष के वचन से-

सदगुर बैद बचन बिस्वासा ।

'मानस' कितने मारग को खोलता है! तुलसी बिलकुल दो-टूक बात कहते हैं, मेरा मोह जायेगा 'जासु बचन रबि कर निकर।' मेरे गुरु के बचन से मेरा मोह जायेगा। गुरु के वचन से मोह जायेगा। हां, गुरु, गुरु होना चाहिए, बस। इतना तो जरूरी है बुद्धपुरुष, बुद्धपुरुष होना चाहिए। यदि मैं और आप किसी बुद्धपुरुष के आश्रित हैं, यदि गुरु की प्रवाही परंपरा में आप की आस्था हो तो; कोई दबाव नहीं है। सीधे पहुंच सकते हैं। कई महापुरुष हमारे यहां आये जो गुरु को नहीं मानते थे। स्वागत है। हम जैसों का क्या? हमें तो कोई चाहिए बुद्धपुरुष जिसके बचन से हमारा मोह जाय। 'दोहावली' में तुलसी कहते हैं-

बचन सुनत मन मोह गत पूरब भाग मिलाहि ।
मुख देखत पातक हरे परसत करम मिलाहि ।।

और मेरे भाई-बहन, पचपन साल की रामकथा की यात्रा करते-करते मैं उस निष्कर्ष पर पहुंच रहा हूं कि मोह को मिटाना बहुत कठिन है। कोई बुद्धपुरुष पर विश्वास होगा तभी काम होगा। गालिब का एक शे'र है-

तलब दीदार की है तो नज़रे जमाये रखना।
नकाब हो कि नसीब कभी तो सरक जायेगा ।

तू तेरी आंखें लगा; तू दीदार में लग जा यदि तुझे दीदार की तलब हो तो परदा हो या नसीब, कभी तो बदल जायेगा। ये गुरुकृपा है हम जैसों के लिए।

मेरे भाई-बहन, गुरु की महिमा गोस्वामीजी बताते हैं। युवान भाई-बहन, ज्ञान मिलेगा गुरु से। मैं फिर बार-बार कहूं प्लीज़, कि गुरु, गुरु होना चाहिए। मुश्किल वहां है! उपनिषद में तो 'गुरु' ही शब्द है। 'सद्‌गुरु' शब्द तो मध्यकालीन संतों ने युझ किया! गुरु के आगे 'सद्' लिखने की कोई जरूरत नहीं लेकिन असद्‌गुरु आ बैठे थे समाज में! तथाकथित गुरु की भीड़ लग गई थी। तब जांच के लिए, परख के लिए मध्यकालीन संतों ने बड़ा पवित्र शब्द निर्मित किया 'सद्‌गुरु।'

गुरु से ज्ञान मिलता है। ज्ञान से मोह भंग होता है। लेकिन गुरुबचन सुनना पड़ेगा। गुरु बीज दे देता है, अद्‌भुत! राममंत्र को बीजमंत्र कहते हैं। हनुमानजी को मुद्रिका दे दी; बीज दे दिया। हनुमानजी ने बीज को विकसित किया। छलांग लगाई। समंदर पार गये और माँ तक पहुंच गये। पराम्बा तक पहुंच गये। और आप जानते हैं 'रामचरित मानस' का प्रथम प्रकरण गुरुवंदना है, जिसको मेरी व्यासपीठ 'गुरुगीता' कहती है। एक-दो पंक्तिओं का पाठ कर ले-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

तो ये है 'मानस-गुरुगीता।' गुरुचरणकमल की वंदना। गुरुचरणकमल रज की वंदना। यहां व्यक्ति पूजा की बात नहीं। गुरु व्यक्ति नहीं होता। गुरु अस्तित्व में एक विशिष्ट व्यक्तित्व होता है। जिसको अवतार भी कुबूल करते हैं। ये गुरुपद है। और यहां व्यक्तिपूजा नहीं है। तुलसीदासजी कहते हैं 'बंदऊँ गुरु पद।' उसका जो स्थान है, उसकी भूमिका जो है, उसकी जो प्राज्ञ अवस्था है, उसकी वंदना है। व्यक्ति की वंदना नहीं है यहां। लेबलवाले को पसंद मत करो, लेवलवाले को पसंद करो। मुझे राज कौशिक कहते हैं, वेदों का भाष्य उपनिषद है। मैंने संतों से सुना है, उपनिषदों का भाष्य है 'भगवद् गीता।' 'भगवद् गीता' का भाष्य संतों ने माना है 'रामचरित मानस।' आगे मेरी व्यासपीठ चले तो मैं विनम्रता से ये कहना चाहूंगा कि 'रामचरित मानस' का भाष्य है 'सुन्दरकांड।' 'सुन्दरकांड' का भाष्य है 'हनुमानचालीसा।' 'हनुमानचालीसा' असल में रामकथा है। 'हनुमानचालीसा' तत्त्वतः रामकथा का भाष्य है। कितने प्रसंगों को समाये हुए 'हनुमानचालीसा' है!

का शे'र याद आ रहा है-

नजरों से चरण चूम लूं या हाथ से छूउं,
पाकीज़गी को देखकर दिल कश-मकश में है।

परम पवित्रता का नाम है सद्गुरु।

तो मेरे भाई-बहन, ये व्यक्तिपूजावाली बात नहीं हैं। हमारे स्वामी शरणानंदजी शायद कहा करते थे कि गुरु को नर मानना वो भी अपराध है और नर गुरु मानना वो भी अपराध है! वो दोनो है, नररूप हरि है। दोनों का समन्वित रूप है बुद्धपुरुष। तो अतुलनीय है सगुरुमहिमा। लेकिन परखना जरा मुश्किल तो लगता है। और गुरु की चरणधूली से आंख पवित्र हो गई तो तो फ़िर निंदा का प्रश्न ही नहीं रहा। समग्र जगत वंदनीय बन गया और इसीलिए तुलसी की सब की सारभूत चौपाई-

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

सब वंद्य लगा पूरा जगत। और इसी शृंखला में राजपरिवार की वंदना तुलसीजी करते हैं। सब से पहले फिर वहां दशरथजी की वंदना से पहले वंदना की माँ कौशल्या की। दशरथजी के प्रेम की गाथा गाई। और फिर मिथिलेश की वंदना सपरिजन, सपरिवार की। भाईओं की वंदना इसमें पहले भरत की वंदना, शत्रुघ्न महाराज, लक्ष्मण आदि भाईओं की वंदना की। और उसमें बीच में अति नितांत आवश्यक वंदना श्री हनुमानजी की लगा दी।

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

पहले दिन की कथा मैं सदैव हनुमानजी की वंदना तक लिये चलता हूं। कोई भी संप्रदाय, कोई भी धर्म के आप पथिक हो, मुबारक। हर जगह परमात्मा है, जिसकी जो श्रद्धा। लेकिन हनुमंत का आश्रय करने से अपने-अपने धर्म में गति विशेष प्राप्त होगी। क्योंकि ये पवनपुत्र है, वायु है। उसके बिना तो हम जी ही नहीं सकते। मैंने संतों से सुना है कि शरीर में पंचप्राण होते हैं। 'मानस' के भी पंचप्राण है। इनकी रक्षा श्री हनुमानजी ने ही तो की है। ऐसा एक परमतत्त्व हनुमंत तत्त्व है। उसका आश्रय करना। ख़बर नहीं, ऐसी किंवदन्ति चलती है कि बहन लोग हनुमानजी की पूजा न कर सके, आरती न कर सके! मेरी समझ में नहीं बैठता! ये किसने डाला है ख़बर नहीं! जब हनुमानजी जानकीजी को ख़बर देने गये लंका में कि रावण सकुल मारा गया है माँ। उसी समय लंका की राक्षसियां दौड़-दौड़कर हनुमानजी की पूजा करने लगी, ऐसा तुलसी लिखते हैं। तो राक्षसीओं को यदि हनुमानजी की पूजा का अधिकार हो तो मेरे भारत की बहन-बेटिओं को क्यों नहीं?

'हनुमानचालीसा' आप कर सकते हैं। 'सुन्दरकांड' कर सकते हैं। हां, कोई विशेष पूजापद्धति हो, उसमें कोई ऐसा नियम हो तो बात ओर है। बाकी श्री हनुमान तो सब का है। हनुमान तो सब को छूता है वायु के रूप में, प्राणवायु के रूप में। छूना क्या? अंदर घुस गया है! हनुमंततत्त्व तो नाभि से नाक तक सतत चालू है। कलियुग है साहब! गुरु खोजना मुश्किल है। मिल जाय तो परखना मुश्किल है। बहुत कठिन मामला है। कोई गुरु समझ में न आये तो हनुमान को गुरु समझ लेना।

जय जय जय हनुमान गोंसाई ।
कृपा करहुँ गुरुदेव की नाई ।।

मेरी व्यक्तिगत धारणा में हनुमानजी की वंदना कोई भी कर सकते हैं। कोई पाबंदी नहीं होनी चाहिए। आज तक रही हो तो सविनय हटानी चाहिए। ऐसे प्राणतत्त्व हनुमानजी का आश्रय को और हनुमानजी की उपासना, साधना करनी हो तो बहुत तंत्र में मत जाना! सट् ने फट् ने इ रे'वा देजो! 'हनुमान चालीसा' करना। ये शुद्ध और सिद्ध है। मेरी जानकारी में नहीं है, किसीकी जानकारी में हो तो मुझे बताईयेगा। कुबूल कर लूंगा लेकिन विश्व का पहला चालीसा कोई हो तो ये 'हनुमानचालीसा' है। चालीसा का सिलसिला आया तुलसी के बाद। बाकी आदि 'हनुमानचालीसा' है। और उसकी प्रत्येक पंक्ति शुद्ध है। इसीलिए उस पर बोलने को जी करता है, गाने का जी करता है। हनुमंत तत्त्व अद्भुत है।

मानस-हनुमानचालीसा :: २ ::

जीभ जब हरिनाम लेती है तो जीभ पर दशावतार होता है

पहले तो मेरे अंत:करण की प्रवृत्ति आप को बता दूं। शायद 'हनुमान चालीसा' की इस शृंखला में आगे मैंने कहा भी हो ख़बर नहीं, मेरा ऐसा दृढ़ मानना है मेरे लिए व्यक्तिगतरूप में कि तुलसी ने 'रामचरित मानस' की रचना करने से पहले 'हनुमान चालीसा' की रचना की है। और ये 'हनुमान चालीसा' के प्रताप से 'रामचरित मानस' एक महामंत्र बन गया; सिद्धमंत्र बन गया। दूसरे चरण में, मेरे मन में अब ये बिलकुल दृढ़ नहीं है कि 'गीतावली', 'कवितावली', 'दोहावली', 'बरवे रामायण' आदि-आदि तुलसी के जो कुछ ग्रंथ है वो किस काल में लिखे गये हो। लेकिन इसमें मेरी व्यक्तिगतरूप में दृढ़ मान्यता है कि पहले 'हनुमान चालीसा' की रचना हुई होगी। उसके बाद मध्य में 'रामचरित मानस' की रचना हुई। और पूज्यपाद गोस्वामीजी की उत्तरावस्था में 'विनयपत्रिका' की रचना हुई है। ये पृथ्वी पर प्रगट हुए एक साधु के ये तीन कदम थे, तुलसी के। तो 'हनुमान चालीसा' का महत्त्व मेरी दृष्टि में विशेष है।

गोस्वामीजी कहते हैं कि जो ये 'हनुमान चालीसा' पढ़ेगा उनको सिद्धि मिलेगी। अब पढ़ने का बहुत अर्थ है मेरे दिमाग में। अभी तो एक कथा बाकी है; जब प्रेरणा हुई, मैं आप से बात करूंगा। पढ़ना मानी 'हनुमान चालीसा' की एक छोटी-सी पुस्तिका लेकर उसका पाठ कर लेना? क्या मतलब है? बहुत-से मतलब है; छोड़ो। लेकिन सीधा-सादा अभिप्राय लें तो गोस्वामीजी कहते हैं कि ये 'हनुमान चालीसा' का पठन, पाठ वगेरे जो करेगा वो सिद्ध हो जायेगा। उसके जीवन में बहुत-सी सिद्धियां आ जायेगी अथवा तो 'इति सिद्धम्' मानी पूर्णता। जैसे कोई बात पूरी हो जाती है तो हम इति कर देते हैं। सिद्ध होना, पूर्ण होना। एक अर्थ में कहे तो, 'पायो परम विश्राम।' और तुलसी को उस समय लगा होगा कि मेरी बात कौन मानेंगे? जब मैं कभी गुरुकृपा से मेरे अंत:करण की प्रवृत्ति आप के पास रखता हूं। आप को व्यासपीठ पर श्रद्धा है। मैं मानता हूं वहां तक भरोसा भी है। जैसा भी हो। क्योंकि तुलसी ने भरोसे के साथ एक ओर शब्द 'मानस'में जोड़ा है, 'दृढ़ भरोसा।' मेरा-आप का भरोसा तो सब में होता है, लेकिन दृढ़ हो ये तुलसी का बहुत प्रामाणिक आग्रह है।

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा ।

आप को ऐसा नहीं लगता कि विश्वास पर्याप्त था। दृढ़ क्यों? सुरदास और तुलसी एक जबान में बोल रहे हैं।

भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो ।

तुलसी ने एक दोहे में लिखा हैं, 'भक्तिभाव भादो नदी।' आदमी की भक्ति, भाव, भरोसा ये भाद्र मास की नदी है। उसमें बहुत पानी होता है। ये स्वाभाविक है। लेकिन भक्तिभाव 'जेठ माह ठकराये।' जेठ महिन में पानी वैसे के वैसा बहे उसीकी को कहते हैं 'दृढ़ बिस्वास।' युवान भाई-बहन, खास समझे ये दृढ़ विश्वास की जो बात है, बहुत महत्त्व की बात है। मुझे लगता है कि जिसका दृढ भरोसा, दृढ विश्वास होता उसको करने का कुछ शेष नहीं रहता। वो उसी क्षण कृतकृत्य हो जाता है। क्यों तुलसी कहते हैं कि तुम्हारा नाम पर दृढ भरोसा होना चाहिए? क्यों हमारी भाव-भक्ति भादों नदी है?

मेरे भाई-बहन, होश-आवेश हो, बाहर आये। एक तमाचा मारने से पहले हमें पता नहीं, चित्त में एक प्रक्रिया शुरू होती है। हम मानते हैं, हम सावधान है। नहीं! पल आने दो। जिसको वाराणसी की कथा से मैंने शुरू किया है 'मोमेन्ट सायन्स।' उसको पल का विज्ञान कहते हैं। युवान भाई-बहनों को मुझे कहना है, इन पल को पकड़ो। आनंद आयेगा जीवन में। बहुत पायेंगे। घटना तो तब घटेगी। और ये कोई निराश होने की भी बात नहीं है। सोचो; 'दृढ़ बिस्वास।' क्यों तुलसी विश्वास के साथ 'दृढ़' शब्द लगाते हैं? क्या विश्वास पर्याप्त नहीं है? 'मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा।' विश्वास दो प्रकार का होता है। एक माना हुआ विश्वास, एक जाना हुआ विश्वास। एक, माना कि आप के पास पांच लाख की घड़ी है लेकिन वो घड़ी आप मुझे दिखा दे तब मेरा विश्वास जाना हुआ हो जाता है। यद्यपि आरंभ माने हुए विश्वास से ही हुआ करता है। लेकिन यात्रा तो तब ही ठीक रहेगी जब माना हुआ, जाना हुआ हो जाय। तुलसी कहते हैं-

जानें बिनु न होइ परतीती ।
बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती ।।

देखो फिर वहां 'दृढ' शब्द आता है, इसीलिए मैं जा रहा हूं।

प्रीति बिना नहीं भगति दिढ़ाई ।

तुलसी दृष्टांत कितना प्यारा देते हैं! कितने ही पवित्र जल से हम स्नान करे मेरे भाई-बहन, लेकिन शरीर कोरा हो जाता है, सूख जाता है। शरीर का चिकनापन दृढ़ तब होता है जब कोई तेल से मालिस करे। कोई सिक्त पदार्थ से, स्नेह से स्नान करे। लेकिन स्नेह है, वो सिक्त है संस्कृत में। वो चिकनाई कभी मिटनेवाली नहीं, वो चिकनाई दृढ़ हो जाती है। इसीलिए गोस्वामीजी कहते हैं, 'प्रीति बिना नहीं भगति दिढ़ाई ।'

तो, हमारी चर्चा ये है कि भादौ नदी से हम थोड़े-थोड़े बाहर आये; जब आये। तुलसी को लगा कि मैं कोई ऐसे साक्षी को रखूं ताकि लोगों को दृढ विश्वास हो जाय कि 'हनुमान चालीसा' पढ़ने से पूर्णता आ जायेगी। इसीलिए कहते हैं-

होई सिद्धि साखी गौरीसा ।

एक साक्षी दे दिया। अब शंकर से बड़ा साक्षी कौन हो सकता है? गौरीसा; गौरी का इश, श्रद्धा का पति। तुलसी कहते हैं, मैं विश्वास की साक्षी देता हूं, मुझ पर नहीं तो विश्वास पर विश्वास करो। आप को पता है, नागरों का ईष्टदेव है हाटकेश भगवान। हाटकेश नागरों ने क्यों पसंद किया? 'हाटक' का अर्थ है स्वर्ण। विश्वास स्वर्ण जैसा होना चाहिए, कथीर जैसा नहीं। लोहे को सोना बनना पड़ता है, सोने को कुछ बनने की जरूरत नहीं।

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।

'कनक भूधराकार सरीरा।' ये स्वर्ण है; उसको कुछ होने की जरूरत नहीं। इनसे कोई चाहे गहना बना लो; लाख कसौटी कर लो। सो टच! विश्वास पर विश्वास किया जाय तो उसके समान ऊंचा कोई शिखर नहीं। तो-

होई सिद्धि साखी गौरीसा ।

और तुलसीदासजी ने फ़िर लिख दिया, 'तुलसीदास सदा हरि चेरा।' तुलसीजी कहते हैं, यदि आप कुछ देना चाहे तो इतना ही करो कि मैं सदा-सदा तेरा दास बना रहूं! सदा, सदा, सदा! और मेरे हृदय में आप डेरा करे, आप निवास करे ताकि मुझ में होश का आवेश कभी न आये। मेरा भरोसा कायम ऐसा का ऐसा बना रहे। तो ये दो पंक्तिओं को आधार बनाकर हम 'हनुमान चालीसा' की

कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं, ये दशवीं कथा में।

अष्ट सिद्धि नव निधि के दाता ।

अष्ट सिद्धि और नव निधि के आप दाता है हनुमानजी। ये लालच है? ये प्रलोभन है? प्रलोभन दे वो साधु नहीं। हमारे विश्वास को दृढ़ करे वो साधु। याद रखना मेरे भाई-बहन, भरोसा तत्त्व हम सब में पड़ा है। हमारी औकात नहीं कि वो दृढ़ हो; वो ही दृढ़ करते हैं। एक परमात्मा और दूसरा अपना बुद्धपुरुष। हम सावन-भादों की नदी है साहब! हम कुछ आवेशों को समझ मान लेते हैं! हमारी ये कमज़ोरियां हैं! तो हमारा भरोसा वो दृढ़ करता है। प्रलोभन नहीं; प्रलोभन दे वो साधु कैसा? तुलसी प्रलोभन देते हैं? आप अष्ट सिद्धि और नव निधिओं के दाता है हनुमानजी। क्योंकि दाता वो बनता है जिसको किसीने पहले दिया हो। वहां बहुत महत्त्व की बात लिखी है।

अष्ट सिद्धि नव निधि के दाता ।
अस बर दीन्ह जानकी माता ।।

ये वरदान आप को जानकी माता ने दिया है। अब हनुमानजी हमें अष्ट सिद्धि, नव निधि दे तो हनुमान चाहिए। लेकिन हनुमान को जानकी देती है। जानकी मिले तो सब से बड़ा काम हो जाय! बीच में से क्यों ले? सीधे भक्ति के चरणों में न चले जाय? छोड़ो हनुमानजी को भी! माँ मिले तो सब मिले। लेकिन माँ कैसे मिली? हम सब को माँ कैसे मिली सोचा है कभी? यद्यपि ये आधा सत्य है लेकिन सत्य तो है। बाप के कारण माँ मिली। बाप न होता तो माँ न मिलती।

जनम हेतु सब कहँ पितु माता ।

माँ-बाप दोनों चाहिए। दोनों की कृपा से संतान का जन्म होता है। तो पिता कैसे मिले? दादा-दादी हो तो। पहले स्थूल क्रम देखो। दादा-दादी कैसे मिले? कुल हो तो। और कुल कैसे मिले? वंश से। वंश कैसे मिले? सूर्य और चंद्र से। सूर्य-चंद्र कैसे मिलता है? ब्रह्म से, परमात्मा से। ब्रह्म कैसे मिलता है? 'प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।' ब्रह्म मिलता है प्रेम से। मूल में प्रेम है। इसीलिए रामकथा को मेरी व्यासपीठ प्रेमयज्ञ कहती है।

तो, ऐसे करते-करते जानकी मिल जाय, जानकीदत्त अष्ट सिद्धि-नव निधि जो हनुमानजी को प्राप्त हुई है और इस हनुमान के शरण में हम बिलकुल प्रलोभन मुक्त हो जाय तो अष्ट सिद्धि और नव निधि मिलती है। लेकिन कुछ सिद्धियां ओर है। कभी मैंने कथाओं में कहा है, मेरा केन्द्रस्थान सिद्धियां नहीं है। अष्ट शुद्धि की चर्चा मैंने शायद कभी आप के सामने की है। शुद्धि ही सिद्धि है मेरी समझ में। लेकिन थोड़ी सिद्धि की बात सुने तो तंत्र में एक सिद्धि की बात है 'कर्णसिद्धि।' उसमें जाना मत, प्लीज़। कहीं भी दो व्यक्ति बात करते हो, आदमी सुन लेगा! ये विज्ञान है! इस सिद्धि का नाम 'कर्णपिशाची' भी कहते हैं। सिद्धि के द्वारा किसी की बातें सुनना विवेक नहीं है, शालीनता नहीं है। और बिना सिद्धि भी कई लोग सुन लेते हैं! हवाई जहाज जाने देंगे लेकिन बात नहीं जानी चाहिए! यद्यपि मैं साफ़ कहता हूं कि इस मारग में जाना मत। क्योंकि दूसरों की बात सिद्धि द्वारा सुनना तुम्हें डिप्रेश कर सकता है, क्योंकि शायद वो तुम्हारे बारे में ही बात करते होगे तो? तो फिर दुःखी हो जाओगे! हनुमंत आश्रय करने से ऐसी सिद्धि मिल सकती है लेकिन ऐसी सिद्धि में न जाये।

दूसरी सिद्धि का नाम है मन की सिद्धि। मन की सिद्धि यानी दूसरा क्या सोचता है वो तुम्हारा मन तुम्हें बता देता है। अब उसको आधुनिक विज्ञान टेलिपथी कहते हैं। जो हो; कभी भगवत्कृपा से बिन मांगे ये किसीको प्राप्त भी हो जाय तो भी कृपया इसका प्रयोग न करना। तीसरी सिद्धि है 'वाक्सिद्धि', वाणी की सिद्धि। जिसको सभाजित कहते हैं। बोले और सभा को पकड़ ले! 'वाक्सिद्धि' के दो अर्थ। एक तो आदमी वाणी की सिद्धिवाले की पकड़ में आ जाय। वाक्सिद्धि का एक दूसरा विभाग है वो 'बोले सो निहाल।' इसके मुख से शब्द निकले, होकर ही रहेगा। इसीलिए बुद्धपुरुष बोलने में बहुत ध्यान रखते हैं। और इसमें कोई साधना की जरूरत नहीं। आदमी जितना अंतःकरण शुद्ध रखेगा उसकी वाणी की सिद्धि आयेगी। और वाणी की सिद्धि आयेगी जप करने से। 'योगसिद्धि।' ये तो बड़ी परंपरा की बात है योगसिद्धि। तुलसीदासजी शिव के बारे में लिखते हैं, 'जोग ग्यान बैराग निधि...।' निधि के रूप में यद्यपि है लेकिन 'योगसिद्धि' भी सिद्धि है। लेकिन योगसिद्धि में

अविद्या आई तो यति की योगसिद्धि का पतन हो जाता है। पांचवीं सिद्धि है 'रससिद्धि।' ये चर्चा शायद मैंने आप के सामने कभी रखी है ऐसी मुझे स्मृति है।

'नव निधि।' अब निधि किसको कहे? निधि अंकशास्त्र है साहब! ये सांख्य है। खजाना, भंडार, ये गिनती का शास्त्र है। लेकिन मेरे भाई-बहन, हनुमानजी का आश्रय करेंगे, 'हनुमानचालीसा' का आश्रय करेंगे तो बिलग प्रकार की निधि प्राप्त होगी। इनमें एक है 'गुणनिधि।' 'अजर अमर गुननिधि सुत होहू।' माँ जानकी ने कहा था, तू गुणनिधि होओगे। हम में कुछ अच्छी क्वोलिटीझ, सद्गुण आये। हनुमानजी की कृपा से हमारे में अच्छे गुण प्रगट होगे। और मैं देखता हूं समाज में सत्संग करते-करते शास्त्र का अध्ययन करते-करते हम में गुण आते रहते हैं। भगवत्कथा से वक्ता-श्रोता के कुछ गुण विकसित होने लगते हैं। तो ये बहुत बड़ी निधि है, हनुमानजी की कृपा से।

दूसरी निधि है 'रामचरित मानस' में 'शीलनिधि।' शीलनिधि मानी अपने जीवन का शील, अपनी रहने की रीतभात; ये हमारा खजाना है। हमारी गंगासती तो बहुत सुंदर बोली-

शीलवंत साधुने वारे वारे नमीए पानबाई,
जेना बदले नहीं व्रतमान...

एक निधि 'रामायण' में है 'करुणानिधि।'

करुणानिधि मन दीख बिचारी।
उर अंकुरेउ गरब तरु भारी ।।

हमारे जीवन में धीरे-धीरे करुणा विकसित हो भगवत्कथा सुनते-सुनते। 'विवेकनिधि।' जनक को विवेकनिधि कहा है। 'वैराग्यनिधि।' वैराग भी निधि है। तेज भी निधि है। आदमी में तेजस्विता हो। और तेज तप के बिना आता नहीं है।

विदुरनीति में लिखा है 'महाभारत' में, जो आदमी सतत यात्रा करता है वो तपस्वी है। तो इसमें तो हम सब आ जाते हैं। हंसवृत्ति से परिभ्रमण करते रहे निरंतर महर्षि लोग 'महाभारत' कहता है, वो तप है। क्यों? क्योंकि निरंतर यात्रा में रहने से राग-द्वेष कम होते हैं। एक जगह रहने से राग-द्वेष बढ़ता है। जो घूमता है उसको रोज नये लोगों को मिलना है। थोड़े समय की मुलाकात होती है इसीलिए राग-द्वेष कम होता है। और जिसका राग-द्वेष कम हो वो तपस्वी नहीं तो क्या है? 'हनुमानचालीसा' में आप जानते हैं-

सब पर राम तपस्वी राजा।

राम को तपस्वी राजा कहा है। क्योंकि वो घूमते रहते हैं। राजा तीन प्रकार के होते हैं यशस्वी, मनस्वी और तपस्वी। 'रामचरित मानस' में यशस्वी राजा है जनक; महाराज दशरथ। बहुत यशस्वी, सुकृति के खजाने हैं ये लोग। मनस्वी राजा है रावण। किसीके काबू में नहीं है ये आदमी! लेकिन हमारे ठाकुर तपस्वी राजा है। लेकिन कलियुग है; सतत घूमनेवालों में भी राग-द्वेष फिर आने लगता है। मैं आप से इनडोर स्टेडियम है न इसीलिए खानगी में एक बात कहूं! दूसरे के बारे में बहुत जानकारी प्राप्त करने से बचो। ये जरूरी नहीं है। जानना हो तो खुद को जितना जाना जाय, जानो। दूसरों को जानने से बड़ी गरबड़ होती है। तेज निधि है। आदमी के बल को भी निधि कहा है। शरीरबल को भी एक खजाना माना गया है। हनुमान का आश्रय करेगा उसका तो शरीरबल अथवा तो मनोबल बढ़ेगा। तुलसी तो मांगते हैं 'हनुमान चालीसा' में-

नाम अवतार है। जीभ जब हरिनाम लेती है तो आदमी की जीभ पर दशावतार होता है। जीभ है धाम। जैसे अयोध्या में राम प्रगट होते हैं वैसे जीभ रूपी धाम पर प्रभु का नाम महाराज बिलग-बिलग युग में, बिलग-बिलग समय में अवतार लेकर आता है। हमारे यहां अवतार का जो सांख्य है वो चौबीस है। पर हम प्रधान दशावतार को मानते हैं। युवान भाई-बहन, मैं दिल से आप से निवेदन कर रहा हूं; कोई तुम्हारे कान में गलत ज़हर डाल दे कि नाम जपने से, तोता रटण करने से क्या होगा? उसकी सुनना मत। व्यासपीठ के हो चुके हो तो नाम मत छोड़ना, नाम तारक है।

बल बुद्धि विद्या देहु मोहि हरहु कलेस बिकार।

आप कभी सोचते हैं मेरे भाई-बहन कि आप शरीर से थोड़े बीमार है फ़िर भी आप कथा में पहुंच जाते हैं! ये बल कहां से आया? ये बल तुम्हारी निधि है। और सही अर्थ में लो तो परमात्मा ने किसीको रूप दिया हो, सुंदरता दी हो तो वो उसकी निधि है। रूप निधि है, एक खजाना है। रूप यदि सही दिशा ले तो रूप वरदान है। ये सब अष्ट सिद्धि और नव निधि देनेवाले हनुमानजी हैं। 'अस बर दीन्ह जानकी माता ।' और यहां माँ का नाम लिया है। और एक बात समझ लो, सब से बड़ी दाता इस विश्व में कोई हो तो माँ है। पिता-माता दोनों जन्मदाता माने जाते हैं। लेकिन माँ जन्मदाता भी है और अपने संतान की भाग्यविधाता भी है। माँ चाहे तो क्या नहीं कर सकती? अब की पंक्ति है-

राम रसायन तुम्हरे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा ।।

'रसायण' शब्द बहुत बड़ा प्यारा है। एक तो आयुर्वेद का शब्द है, विज्ञान का शब्द है। 'भक्ति रसायण सिंधु' तो पूरा एक ग्रंथ हमें प्राप्त हुआ है भारत में। 'हनुमान चालीसा' में लिखा हुआ ये 'राम रसायण' बहुत बड़ा हमें लाभान्वित कर सकता है।

एक जिज्ञासा है। महाराष्ट्र से आये हुए एक श्रोता ने पूछा है, 'बापू, अपने घरवालों की बहुत गालियां सुनकर आपकी कथा सुनने आते हैं! तो क्या हमारा ये कथामोह बुरा है? क्या बापू, सत्संग का मोह बुरा होता है? रावण को आपने भी मोह कहा तो फिर रावण की आपने कथा क्यों गाई? बापू, आइ एम कन्फ्यूझ। और वो कृष्ण मन मोहता है उसका क्या?' कथा में आने का मोह, मोह मिटाने का प्रयोग है। कथा में मोह लेकर जरूर आओ। लेकिन ठीक से कथा गाई जाये, सुनी जाये तो आदमी मोहमुक्त होकर जायेगा। धीरे-धीरे मोह की दिशा बदलेगी। इसीलिए कथा के प्रति मोह गलत नहीं है। ये मोह मिटाने का एक बहुत बड़ा प्रयोग है। 'रावण महा मोह है तो आपने उसकी कथा क्यों गाई?' रावण को मारने के लिए गाई! रावण का निर्वाण हो इसीलिए गाई। अब मैं तो गाउं लेकिन भगवान राम ने क्यों युद्ध किया रावण से? क्या जरूरत थी? ये परमात्मा को ये करने की क्या जरूरत थी? ये मोह का खूबसूरत रूप है। मोह दशाननी है, जितनी बार सिर काटो...! राम को पसीना आ गया मोह को मारते-मारते! तो कथा तो गानी पड़ेगी रावण की, वो न हो तो कैसे राम को प्रस्थापित किया जाय? तो कथा के प्रति मोह मेरी दृष्टि में अच्छा है। मुझे तो यह मोह लगा है कि बारि-बारि कथा करता ही चला हूं। ये 'मोह' शब्द आप ने पूछा है इसीलिए कहूं, बाकी मोह नहीं है, नेह है। ये कथाप्रेम है। तो तुलसी की दृष्टि में मोह बड़ा गंभीर माना गया है। लेकिन इस दिशा में हो जाये तो मोह नेह में परिवर्तित हो जायेगा। तो, कथा का मोह मोहभंग का सात्त्विक उपाय है।

कथा का क्रम निभा लूं। सीता-रामजी की वंदना गोस्वामीजी ने की। और उसके बाद आप जानते हैं पूर्णांक में, बहत्तर पंक्तिओं में तुलसीजी रामनाम की वंदना करते हैं।

बंदऊ नाम राम रघुबर को।
हेतु कृसानु भानु हिम कर को।।

नाममहिमा पर बोलने का मेरा रिहर्सल चल रहा है! इसीलिए मैं कम्बोडिया में भी उसकी ओर दौड़ जाता था! बनारस में भी दौड़ रही नाममहिमा की ओर! रियाज़ कर रहा हूं! अंदर से तो पूरा हो गया है लेकिन आप के सामने कैसे पेश करूं, उसकी अभिव्यक्ति कैसे करूं ताकि माँ के दूध की तरह आप के हृदय में नाम की स्थापना हो जाय, बस! कभी-कभी मुझे भी लग रहा है कि वाग्विलास तो नहीं है ये सब? ये चुटकुला सुनाना, ये गाना, ये करना, ये सब? लेकिन मैं सभान हूं कि ये सब कहते-कहते आख़िर में तो पकड़ना है नाम की डौर। हरिनाम, हरिनाम, हरिनाम। नाम साधन है ही नहीं, साध्य है।

मैं 'हनुमान जयंती' पर नाममहिमा पर बोल रहा था शाम को तब मैंने कहा कि नाम अवतार है। जीभ जब हरिनाम लेती है तो आदमी की जीभ पर दशावतार होता है। जीभ है धाम। जैसे अयोध्या में राम प्रगट होते हैं वैसे जीभ रूपी धाम पर प्रभु का नाम महाराज बिलग-बिलग युग में, बिलग-बिलग समय में अवतार लेकर आता है। हमारे यहां अवतार का जो सांख्य है वो चौबीस

है। पर हम प्रधान दशावतार को मानते हैं। युवान भाई-बहन, मैं दिल से आप से निवेदन कर रहा हूं; कोई तुम्हारे कान में गलत ज़हर डाल दे कि नाम जपने से, तोता रटण करने से क्या होगा? उसकी सुनना मत। व्यासपीठ के हो चुके हो तो नाम मत छोड़ना, नाम तारक है।

नाम दशावतारी है। कैसे? हमारे यहां कच्छप अवतार हुआ। प्रभु कछुअे के रूप में आये। पौराणिक कथा से आप परिचित है। मुझे इतना ही कहना है, बहुत जटिल मंत्रों में भी मत जाना। 'रा' कहने से काम बन जाता है तो लम्बी-चौड़ी यात्रा करने की क्या जरूरत है? आप की रुचि इस महंगी साधना में हो तो जरूर करो! तो परमात्मा का नाम जबान से लेते-लेते हमारे हाथ, आंख, नाक, कान, जिह्वा, पैर ये सभी ईन्द्रियां प्रत्याहार शुरू करने लगे, लौटने लगे। प्रत्येक इन्द्रियों को कछुअे के अंग की अंदर समेटने की वृत्ति हरिनाम जपते-जपते जब जगे तब समझना कूर्मावतार हुआ। मछली पानी में तैरती है और जीवित रहती है। पानी छोड़ दे तो मछली मृत्यु को प्राप्त करती है। हरिनाम लेते-लेते जापक की आंख रूपी मछली जब एक सजल सरोवर में तैरती रहे। प्रभु का नाम लेते-लेते क्षण-दो क्षण आंखें ड़बड़बा जाय, मैं भरोसे के साथ कहता हूं समझना, मत्स्यावतार हुआ है।

तीसरा अवतार है वराह अवतार। पृथ्वी डूबी जा रही थी और वराह भगवान ने पृथ्वी को उठाया, बचाया। हरिनाम लेते-लेते हमारी पारिवारिक पृथ्वी, इसको हम उठाये रखे। नाम जापक को पृथ्वी को उलट देना नहीं है, छोड़ देना नहीं है। हमारी पारिवारिक पृथ्वी को संभालना है। जगत बोज़ न लगे अथवा तो जगत का बोज़ उठाना हमें अवतारकार्य समझ में आने लगे नाम प्रताप से तब समझना मेरी जबान पर वराह अवतार हुआ है। नाम लेते-लेते अपना हृदय दर्शन शरू हो जाय और अंदर कहीं भी लोभ, महत्त्वाकांक्षा और अहंकार की जड़ता न रहे तब समझना, मेरी जबान पर नृसिंह अवतार हुआ है। नाम जपते-जपते साधक में त्रिभुवन को नापने का सामर्थ्य आ जाये फ़िर भी जगत के सामने बिलकुल छोटा बनकर दिखाई दे वो है वामन अवतार। फ़िर आवेशावतार परशुराम; रामनाम जपते-जपते हमारी बुद्धि के दरवाजे खुल जाये, और सत्य समझ में आने लगे तो समझना रामनाम की कृपा से मेरी जबान पर परशुराम का अवतार हुआ है। कुछ समय होता है, आदमी नाम जपता है तो भी कि मौका आने पर बदला ले लूंगा! हां, मैं देख लूंगा! ये सब प्रपंच धीरे-धीरे-धीरे परशुराम की तरह शमित होने लगे, ऐसी बुद्धि होने लगे तब साधक को समझना चाहिए मेरी जबान पर परशुराम भगवान का अवतार हो चुका है।

और फ़िर राम अवतार। उसके लिए तो क्या कहना? जपते-जपते हमें भी दूसरों को आराम और विराम मिले ऐसी शुभ भावना प्रगट होने लगे तो समझना, जबान की अयोध्या में राम अवतार हुआ है। कृष्णावतार; कुछ अवतार का तो प्रत्यक्ष संकेत है 'मानस' में। 'जीह जसोमति हरि हलधर से।' प्रत्यक्ष संकेत है, 'रा' और 'म'। तुलसी कहते हैं, कृष्ण और बलराम की तरह जीभ रूपी यशोदा की ये संतान है 'र'कार और 'म'कार। परमात्मा की लीला, नाम, परमात्मा का रूप, परमात्मा का श्रीधाम वृंदावन ये सब भाव में वृद्धि करने लगे, केवल आकर्षण कृष्ण का ही बचे, एक ही आकर्षण मात्र रहे; बाकी सब जगह से असंगता आने लगे तब समझना, हमारी जीभ पर कृष्ण-बलराम प्रगट हुए हैं। ये है कृष्णावतार। नाम जपते-जपते सब साधन छूट जाय और केवल और केवल विशुद्ध बचे, एक बुद्धता अर्जित होने लगे, समझना, मेरे भीतर बुद्धावतार हुआ है। और कल्की अवतार बाकी है। कहते हैं, दक्षिण में होनेवाला है कोई ब्राह्मण के घर आदि आदि...! महात्माओं से सुना हैं। कई लोग तो कहते हैं, हो भी गया है! मुझे तो इतना ही कहना है कि बाप, नाम जपते-जपते हमें जब महसूस होने लगे कि मेरा मन निष्कलंक हुआ है; मेरी बुद्धि अव्यभिचारिणी हो रही है और मेरे चित्त में कोई संस्कार नहीं बचे ऐसी निष्कलंकता ही नकलंक अवतार है। ये ही कल्कि अवतार है। हमारा जीवन प्रसन्न ज्यादा रहे, निष्कलंक और निर्मल होने लगे तब समझना कि जबान पर कल्कि अवतार हुआ है।

तो, नाम की अद्‌भुत महिमा है। नाम ॐ कार स्वरूप है, प्रणवरूप है। चारों युगों में नाम प्रधान है।

'हनुमानचालीसा'का अनुसंधान आदमी को युगबंधन से मुक्त करता है

गोवा की इस नवदिवसीय रामकथा में प्रधानतः सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा 'मानस' पर आधारित 'मानस-हनुमानचालीसा' पर हो रही है।

राम रसायन तुम्हारे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।

इस पंक्ति को आगे ले जाना है। प्रसन्न और प्रशांत चित्त से आप श्रवण करे। चालीसा के बारे में बहुत-सी बात पूछी जा रही है कि 'हनुमानचालीसा' में चालीस का ही अंक क्यों? 'हनुमानचालीसा' पर पहली बार, दूसरी बार जब बोला गया क्रम में तब शायद उसकी चर्चा हुई भी है। चालीस के अंक की हमारे यहां एक विशेष महत्ता भी है; लोक में, वेद में भी।

चालीस का अंक मेरा ऐसा समझना है; आप सब जानते हैं, मैं बार-बार ये वाक्य दोहराता हूं, दोहराता रहूंगा कि यहां से जो कहा जाय वो आपको मानना ही ऐसा नहीं है। आप सुने, आप महसूस करे, आप जाने, फिर आपको ठीक लगे तो आप उस पर आगे यात्रा कर सकते हैं। लेकिन जिन बातों से मुझे कुछ फायदा हुआ है ये बातें मैं केवल आपके साथ शेर करता हूं। चालीस का मेरा मतलब है ४०-फोर, झीरो। मैं ये कहना चाहूंगा आप सबको कि जीवन में जो व्यक्ति चार वस्तु को समाप्त कर दे, शून्य कर दे। और शून्य दोनों का प्रतीक है हमारे यहां। शून्य एक तो

रिक्त है, खाली है; उर्दू में जिसको 'खला' कहते हैं। 'खला' मानी गेब, आसमां। तो एक तो शून्य ये खाली अंक है। और दूसरा झीरो मानी शून्य ये पूर्ण भी है। इसमें कोई कोना नहीं है। जहां कोना होता है वहां छिपाने की सुविधा है, जहां वर्तुल है वहां कुछ छिपा नहीं सकते। कोना आया तो वहां हम कुछ छिपा सकते हैं और सफल भी हो सकते हैं। इसीलिए हम कहते हैं कि दिल के कोने में कोई बात रख दो। अथवा तो 'लोचन जल रह लोचन कोना।' आप आंसूओं को आंख के कोने में कहीं रख दो।

आप हालात को, अवस्था को छिपा सकते हो। शून्य में और पूर्ण में छिपाने की कोई व्यवस्था नहीं है। जो पूर्णता को प्राप्त कर ले वो लाख चाहे तो भी छिपा नहीं सकता। व्यवस्था ही नहीं है छिपाने की। टोटली इम्पोसिबल। इसीलिए भगवान बुद्ध शून्य की बात करते हैं। जगद्गुरु आदि शंकराचार्य पूर्ण की बात करते हैं। कथा सुनते-सुनते, कथा गाते-गाते हमारी कुछ विशेष अवस्था बनने लगती है तब आप लाख चाहेंगे तो भी छिपा नहीं पायेंगे। हम कोशिश न करे प्रदर्शन की लेकिन आंखवालें दर्शन कर ही लेंगे। नानक ने पूर्णता को उद्घोषित करने के लिए कभी कोशिश नहीं की है। न कबीरसाहब ने, न तो ज्ञानेश्वर महाराज ने की है। लेकिन वो छिपा नहीं पाये।

मैं आप से युवान भाई-बहन, एक ओर बात कहूं, व्यवहार में पहले सोचो फिर कूदो; अध्यात्म में पहले कूदो, फिर सोचना, न सोचना मारो गोली! अध्यात्म में-प्रेममारग में सोचने की जगह नहीं है। हां, व्यवहार में तो सोचना ही चाहिए। क्योंकि व्यवहार में तो कदम-कदम पर लोग मुश्किल में पड़ते हैं। तो व्यवहार में सोचना जरूरी है। फिर कूदना। परमात्मा के जगत में यानी अध्यात्म में पहले छलांग ली जाती है। कूद लो। हां, 'रामायण' में सिखाया, कूदने से पहले विचारना नहीं, खाली मालिक का एक बार स्मरण करना। 'मानस'कार कहते हैं, अपने इष्ट का पहले सिमरन कर लेना, फिर कूद लो। तो मेरे भाई-बहन, व्यवहार में जरूर सोचियेगा, अध्यात्म में नहीं। तो एक अवस्था ऐसी आ जाती है साधक की कि वहां वो अपने आप को प्रदर्शन न करने पर भी दर्शन कर लेते हैं। मेरी समझ में नहीं आता है कि दुनिया के किसी भी पदार्थ को मजहब से कोई लेना-देना नहीं। आकाश को कोई मजहब नहीं, पानी को नहीं, पेड़-पौधें को कोई मजहब नहीं, पृथ्वी को नहीं, एक इन्सान पर क्यों लादा गया है ये?

जब नयी राह मैं दिखता हूं।
सामने एक सलीब पाता हूं।

वधस्थंभ आ जाता है! मनसूर के लिए शूली आई! चढ़ा दो इस आदमी को! जुनेद समझा रहा है। लेकिन मैंने जिस तरह ये कहानी पढ़ी तो मुझे कहने कि इच्छा होती है कि वो गुरु जरूर था, लेकिन मन्सूर जितना पहूंचा हुआ नहीं था। मन्सूर पहुंच गया था। कथा से तो आप परिचित है कि मन्सूर को फिर शूली मिलती है। इस्लामधर्म के ही तो लोग थे सब जो मन्सूर के विरुद्ध में थे! सबको बादशाह ने एक-एक पत्थर पकड़वाया था कि मन्सूर को मारना। जो नहीं मारे तो उसको पहले मार दिया जायेगा! तो इतने लोगों ने पत्थर मारा, लहुलुहान कर दिया इस आदमी को! अब इनका गुरु भी वहीं था और सबकी निगाहें गुरु पर थी कि गुरु मारता है कि नहीं? क्योंकि न मारे तो बादशाह समझेगा कि ये उसके पक्ष में है तो उसको भी चढ़ा दो! गुरु कमजोर था! अवश्य कमजोर था, चेला आगे बढ़ गया था। तो जुनेद ने एक बीच का रास्ता खोजा कि मैं पत्थर न मारूं, कम से कम फूल मारूं। तो उसने फूल लिया। और जब लोग पत्थर मार रहे थे तो मन्सूर हंस रहा था। जुनेद ने जब फूल मारा तो वो रोने लगा! सबने कहा, गज़ब का आदमी है! हम पत्थर मार रहे हैं, शूली पर तुझे लिये जा रहे हैं और सलीब पर चढ़ाया जा रहा है और तू मुस्कुराता है! और जुनेद ने फूल मारा तो तू रो पड़ा है! बोले,अपने ने मारा इसीलिए रोना आ रहा है! ये तो नासमझ थे। इसको तो पता ही नहीं था लेकिन वो तो मेरा गुरु है। कुल मिलाकर इतना ही कहना है बाप कि पूर्णता या शून्यता कुछ छिपा नहीं सकती। जब कोई साधक बिलकुल आत्मनिवेदन करने लगे तो ये नववीं भक्ति है 'भागवत' की। तब समझना या तो आदमी झीरो हो गया है या तो पूर्ण हो गया है।

तो, शून्य को हमने खाली भी कहा है और पूर्ण भी कहा है। शास्त्र में और जीवन में जितनी-जितनी चार चीज है उसको साधक जब शून्य करने लगेगा तब चालीसा को आत्मसात् कर लेगा। 'हनुमानचालीसा' की चालीस पंक्ति ये अद्भुत है। केवल पाठ-पारायण कर लो, ये अद्भुत है। उसमें जो कुछ बातें लिखी है कि बंधन से छूट जाओगे, ये होगा, ये होगा, उसी लालच में करो तो भी छूट है। लेकिन कोहीनूर हीरे से आलू खरीदने की कोशिश मत करो! कोहीनूर से जमाना खरीदा जा सकता है। अब 'हनुमानचालीसा' के आखिरी पड़ाव पर हम जा रहे हैं तब दर्शन बदलो।

तुलसीदासजी ने 'मानस' के 'उत्तरकांड' में लिखा है बाप, जीव की सब से बड़ी दुर्बलता है उसकी महत्त्वाकांक्षा। न हो ये मैं नहीं कहना चाहता। व्यवहार जगत में, भौतिक जगत में महत्त्वाकांक्षा होनी चाहिए। हमारा धंधा-धन बढ़े उनकी आलोचना नहीं करनी चाहिए। ये धन नहीं बढ़ता तो कौन कथा करवाता? कौन इतना सुंदर आयोजन कर लेता? आलोचना नहीं करनी चाहिए। लेकिन विवेक से चिंतन तो जरूर हो।

'हरिहर' का क्या अर्थ होता है, पता है आपको? दु:ख हरता है उसको 'हर' कहते हैं और 'हरि' उसको कहते हैं जो हमारा सुख भी हर लेता है! अब ऐसा अर्थ करेंगे तो कौन हरिनाम लेगा? और मैं 'हे हरि, हे हरि', रटता रहता हूं। तुलसी रटता रहता है। अब हमारा कोई दु:ख हर लेंगे तो तो अच्छा लगेगा, लेकिन सुख भी हर ले तो अच्छा नहीं लगेगा। लेकिन सोचो, 'हरि' हमारा यदि सुख हर ले तो राजी हो जाओ। क्यों? परमात्मा हमारे सुख को भी हर लेता है। फिर अपने पास रखता है। जब हमें जितनी जरूरत होती है इतना देता है। नादान बच्चे को एक लाख रूपिया जेब में नहीं देना चाहिए। उसको जितनी जरूरत होती है इतना देना चाहिए। मेरा ठाकुर बहुत कृपालु है। सुख हर करके ये कठोर नहीं है। वहां उनकी भीतरी कृपालुता महसूस करो मेरे भाई-बहन। तूं कहीं तेरे पास आया सुख बेकार उडा देगा इसीलिए मैं हर लूं। और जब तुझे जरूरत होगी, मौके पर दूं।

आज मेरे पास एक प्रश्न ये भी आया कि 'बापू, कल आपने ये कह दिया कि तुलसी ने 'हनुमानचालीसा' की रचना पहले की। किस बल पर?' ये आप मुझे मत पूछो। मेरे अंत:करण की प्रवृत्ति के बल पर। मैंने आपको बाध्य नहीं किया आप लिख लो, गांठ बांध लो। मैं कोई प्रचार नहीं करता। ये मेरी बात है। लेकिन कारण खोजोगे तो एक कारण है भी। क्योंकि 'रामचरित मानस'वाला राम तुलसी को हनुमानजी के थ्रू मिला है। 'हनुमानचालीसा' के प्रताप से 'रामचरित मानस' की रचना हुई। ऐसा व्यक्तिगत रूप में तलगाजरडा मानता है। गोवा को मानने की जरूरत नहीं है! ये मेरी मान्यता है। आपकी मान्यता आप रखे। आप तो स्वाभाविक है मेरी बात मान लेंगे। विचारकों में भी चर्चा शुरू हो जाती है कि बापू ने किस आधार पर बोल दिया? सब आधार शोधते हैं। और आधार सब पराया होता है, अनुभव अपना होता है।

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना।
सत हरि भजनु जगत सब सपना।।

शंकर कहते हैं, भगवान का भजन सत्य है। ब्रह्म सत्य नहीं। ये 'रामायण' बहुत संशोधन करता है। जगद्गुरु आदि कहते हैं, 'ब्रह्म सत्यं।' भारत की पूरी मनीषा कहते हैं, 'ब्रह्म सत्यं।' शंकर कहते हैं, ब्रह्म का भजन सत्य है। और जगत मिथ्या नहीं, जगत सपना है। बहुत सुंदर संशोधन है। तुलसीदास 'विनयपत्रिका' में कहते हैं -

कोउ कहे सत्य जूठ कहे कोई उभय प्रबल कोई माने।

ये तीनों भ्रम है। प्लीज़, तुलसी को ठीक से पढ़िए साहब! तुलसी कहते हैं, जो लोग कहते हैं, ब्रह्म सत्य है वो भी भ्रम है। जो कहते हैं जगत मिथ्या है, वो भी भ्रम है। और कोई कहते हैं, आधा सत्य है, आधा झूठा है। अपने को पहचाने बिना तीनों भ्रम है! तुम खुद को पहचान लो। आधार छोड़ो। आधार अच्छी बात है। शास्त्र प्रमाण है। लेकिन बहुत बड़ा जलाशय मिल जाता है तब छोटे जलाशय की दरकार साधक नहीं करता। वैसे समस्त वेदों का अतिक्रमण करने कि 'गीता' ने सूचना दी है। जब तुम

परम की प्राप्ति का अनुभव करते हो तब तुम इन सबको छोड़ो और निकल जाओ आगे।

तो, विशेष अनुभव करने के लिए 'चालीस' का अंक समझे। चार वस्तु को शून्य कर दी जाय तो पूर्णता। 'हनुमानचालीसा' पूर्णरूपेण आत्मसात् तभी होगा। मेरे अनुभव में जो हुआ। मैं बिलकुल निजी बातें आपके सामने कर रहा हूं क्योंकि आप मेरे निज है। आप मेरे श्रोता है, मेरी ममता के केन्द्र है आप इसीलिए कहता हूं। बाकी ऐसी बातें करना आत्मश्लाघा भी हो जाएगी। लेकिन जिसको जो अर्थ लगाना, करे, क्या बात है! अर्थ लगानेवालें तो यही काम करेंगे, उसको तो ओर काम नहीं है! 'हनुमानचालीसा' का पठन करते-करते आपको लगे कि मेरा मन झीरो हो गया। कठिन बहुत है, लेकिन अवस्था आती है। मन के संकल्प-विकल्प शांत हो गये हैं। 'हनुमानचालीसा' का अनुसंधान करते हुए बौद्धिक विचार समाप्त हुए हैं। 'हनुमानचालीसा' का पारायण करते-करते जब चित्त में संग्रहित जनम-जनम के संस्कार की विस्मृति हो जाय। और 'हनुमानचालीसा' का पाठ करते-करते अहंकार टूट जाय। ये चार को झीरो करना।

ये सब 'मानस' के आधार पर मुझे आपके सामने रखना है। धनुष शंकर का जो है ये अहंकार है। यहां मेरी व्यासपीठ मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार चारों को झीरो करने को कहती है ताकि 'चालीसा' आत्मसात् हो जाय। भगवान शंकर ने इस धनुष से त्रिपुर को मारा था। त्रिपुर को मारने के बाद ये धनुष शंकर ने छोड़ दिया। धनुष पर बाण चढ़ाया होगा। रहस्य समझियेगा मेरे भाई-बहन, बहुत फायदा होगा। मुझे हुआ है, इसीलिए बांट रहा हूं। राक्षस मर गया फिर धनुष्य छोड़ दिया। क्या मतलब? हमारा अहंकार तब तक रखो जब तक दूषण को समाप्त करना हो। लेकिन दूषण समाप्त हो जाय तो फिर जिस साधन से दूषण समाप्त हुआ उस धनुष को भी छोड़ दो। ये क्रम है। बड़ा प्यारा विश्व को संदेश दिया शिवजी ने। मैं कहता हूं कि, मैं कह रहा हूं तो मुझे 'मैं' बोलना ही पड़ता है। अब बोलना हो तो 'मैं' का धनुष में रखता हूं, चढ़ाता हूं। लेकिन तीन घंटे की कथा पूरी हो जायेगी तो मैं धनुष छोड़ दूंगा, मौन हो जाउंगा। अब 'मैं' खतम! आपके पास रिवोल्वर है, बंदूक है, किंमती वस्त्र है, लेकिन जब हम सोने जाते हैं तब सब छोड़ देते हैं। 'मेरा' और 'मैं' छूटता है तब कभी पांच-छ घंटे का विश्राम उपलब्ध होता है। वैसे जीवनभर का मैं जब छूटता है तब तुलसी की तरह हम कह सकते हैं, 'पायो परम बिश्राम।' तभी ये उद्घोषणा हो सकती है।

शिव की कृपा से अहंकार छूटेगा और भक्ति की कृपा से अहंकार थोडा हलकाफूल हो जायेगा, बोज नहीं बनेगा। उसके बाद भी निश्चिंत मत होना। उसके बाद तीसरी घटना घटी 'रामचरित मानस' में, जिसमें रामजी ने धनुष तोड़ दिया। परशुरामजी आये। उस काल में जनक जैसा ज्ञानी कोई था नहीं। उसको परशुराम ने कहा, मूरख! धनुष किसने तोड़ा? तू मूरख है! और परशुरामजी कहते हैं, सुना है मैंने कि ये धनुष की तेरे घर में पूजा होती थी। हां, तो जिसकी तू पूजा करता था उसको तूने तुड़वा डाला? दुनियाभर के जनक यही काम करते हैं! जिसकी पूजा करते हैं उसकी ही टांग तोड़ते हैं! और धनुष तोड़ने के लिए है कि चढ़ाने के लिए? धनुष तोड़े उसको सीता मिले ऐसी प्रतिज्ञा मूढ़ता का परिचय है! ये तो बिलकुल जड़ प्रतिज्ञा है तेरी! तू जड़ है। यद्यपि जनक चाहते तो इसका जवाब दे सकते थे। लेकिन बुझर्गों के साथ बहस करना विवेक नहीं है, ये जनक जानते थे।

मैं युवानों को भी कहूं, जो बुझर्ग है, थोड़े अनुभवी है, उसकी बात समझ में न आये और अनुभव के नाते ये थोड़ा गुस्सा भी कर ले तो उसके साथ बहस में मत उतरना। मेरी समझ में तीन प्रकार के लोग हैं। मैंने कभी बोला भी है, छपा भी है। कुछ लोग आर्टिस्ट है। शंकर सभी कलाकारों के शिरोमणि है, नटराज। सन्मान होना चाहिए आर्टिस्ट का। 'संकटमोचन' के मंदिर में गुलामअली का सन्मान होना चाहिए। और मुझे इससे भी ज्यादा अच्छी गुलामअली साहब की बात ये लगी कि वो फाईवस्टार होटल में बनारस में नहीं ऊतरे! एक ओर नमाज़ पढ़ ली उसने।

तो, समाज में कुछ लोग 'आर्टिस्ट' होते हैं। कुछ लोग 'हार्टिस्ट' होते हैं। हृदयवाले होते हैं, दिलवाले होते हैं कि जिसमें संवेदना है। अपने शब्द से, अपने वर्तन से किसी का दिल दुभ गया हो तो कोई कोने में छिपकर

दो आंसू गिरा दे वो 'हार्टिस्ट' है। आपके घर में नौकर-चाकर है। इसका भी दिल न दूभे। आखिर याद रखना। तभी सत्संग सफल होगा। अकेला 'आर्टिस्ट' इस जगत को छोड़ते समय डकार नहीं ले सकता है। तीसरी श्रेणी है 'कोर्टिस्ट।' सतत तकरार, तकरार, दलीलबाजी, लोजिक! और तर्क करने में कभी परिणाम नहीं आता। तर्क काटने में अतिरिक्त कुछ भी कर सकता है। इसीलिए मेरी दृष्टि में कुछ लोग 'कोर्टिस्ट' होते हैं! अंग्रेजी में कहा जाय कि नहीं मुझे खबर नहीं, लेकिन ये 'तलगाजरडा' 'शब्दकोश' है बिना प्रकाशित किये हुए! संपादक मोरारिबापू है। तो कुछ लोग 'कोर्टिस्ट' होते हैं। तकरार, तकरार, तकरार! दलीलें, बयानबाजी, बहश अकारण! प्रत्येक व्यक्ति का घर कोर्ट बनता जा रहा है! 'हार्ट' तो खतम हो गया! 'आर्ट' तो रही ही नहीं। छोटे-छोटे घर कोर्ट बन गये है! बाप बेटे से तर्क करता है; बेटा बाप से! पति-पत्नी की तो बात ही मत करो! वो तो सुप्रिम कोर्ट के आमने-सामने जज है! निर्णय ही दे! सोचो।

मेरी मूल चर्चा थी मेरे भाई-बहन कि अहंकार कम से कम काम कर लेने के बाद तो छोड़ दो। और फिर भजन करो। माँ जानकी का आश्रय करो। अहंकार अभी छोड़ा है, टूटा तो नहीं है, लेकिन भक्ति करने से थोड़ा हल्का हो जायेगा। रहेगा जरूर लेकिन अहंकार हम को घोडा नहीं बनायेगा, हम उसको घोडा बनायेंगे। जानकी ने अहंकार को घोडा बनाया और 'रामचरित मानस' में राम ने कामदेव को घोडा बनाया। बाप, 'हनुमानचालीसा' का अनुसंधान बनाये रखो। छोटे-बड़े लाभों के लिए 'हनुमानचालीसा' प्लीज़, छोड़ मत देना। जरूर करो, एक सौ आठ बार करो, ग्यारह-बार करो। मैं भी कहता रहता हूं, लेकिन सब प्रलोभन धीरे-धीरे गिर जायेंगे। साधक उपर उठेगा। हिमालय चढ़ना हो तो थोड़ा सामान कम करना चाहिए।

तो, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार चारों जब शून्य हो जाय। ये है 'हनुमानचालीसा' आत्मसात् करने का एक प्रमाण। दूसरा, धरम, अर्थ, काम और मोक्ष वो चारों शून्य हो जाय। 'हनुमानचालीसा' इसीलिए मत करो कि आपको लोग धार्मिक कहे। 'हनुमानचालीसा' धार्मिक वस्तु नहीं है। हमारे धर्म में आई है ये हमारा गौरव है। क्यों कृष्ण ने कहा, 'सर्व धर्मान् परित्यज्य।' आदेश देता है, हुकम करता है; बिना सोचे छोड़ दे ये सब! सब शृंखला से बाहर हो जा। पंक्ति आती है 'और देवता चित्त न धरई।' ये है, 'मामेकं शरणं व्रज।' धर्म की उपेक्षा नहीं है, बायपास है। धर्म धर्म है। अब निकल जाये हम बायपास से। क्योंकि धर्म में बड़ी भीड़ लगी हुई है! चक्काजाम है! और शंकराचार्य कहते हैं, 'एकान्ते सुखमास्यताम्।' तू कभी अकेला हो जा। आदमी को अपने एकांत की इज्जत होनी चाहिए। आदमी के एकांत को इज्जत परिवारजनों को देनी चाहिए। क्योंकि हम केवल रूपये कमाने के लिए धरती पर थोड़े हैं? ये कमाओ, जरूर कमाओ, प्लीज़ कमाओ। मैं दिल से कहता हूं और यदि मेरा दिल साफ है और दुआ लगे तो मैं दुआ देता हूं कि कमाओ। लेकिन इसको लक्ष्य मत समझो।

'हनुमानचालीसा' को आत्मसात् करने के लिए ये चार पुरुषार्थ अथवा तो ये चार फल जो कहो। यद्यपि तुलसी ने प्रारंभ में कहा है, 'जो दायक फल चारी।' पहले दिया गया। लेकिन इसीलिए दिया कि तू अनुभव करके और पूरा करने मैं जब पहुंचे तब ये चारों छोड़ दे, चालीसा पूरा हो जायेगा। 'जो यह पढै हनुमान चालीसा।' तब ये चार झीरो कर दे।

मेरी समझ ऐसी दृढ बनती जा रही है कि 'हनुमानचालीसा' को जो आत्मसात् करता है वो सतजुगी नहीं रहता, वो त्रेतायुगी नहीं रहता, वो द्वापरयुगी नहीं रहता, वो कलियुगी नहीं रहता, केवल कथायुगी रह जाता है; केवल प्रेमयुगी रह जाता है। किसको युग का भान रहे? छोड़ो! युग की बातें भी बंधन है। 'युग' मानी दो; युग्म। और जहां दो होते हैं, द्वैत होता है, वहां बंधन है। 'हनुमानचालीसा' का अनुसंधान आदमी को युगबंधन से मुक्त करता है। आदमी युगबंधन से बाहर निकले। चतुर्फल और चतुर् पुरुषार्थ से बाहर निकले। आदमी मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार से बाहर निकल जाय। ये है 'चालीसा' का आत्मसात् होने का प्रमाण।

तो, जितनी-जितनी चतुर्दशीय वस्तु है मानवजीवन के साथ जुड़ी हुई, 'हनुमानचालीसा' आत्मसात् करते-करते 'हनुमानचालीसा' की केवल स्मृति, माला अंदर चालू रहे तब आदमी को ये चार चीज़ की खबर न रहे कि मैं सुषुप्ति में हूं, मैं स्वप्न में हूं, मैं जागृति में हूं कि में तुरीया में हूं। चारों अवस्था से बाहर होने के कई मारग हमारे योगशास्त्र में भी बताये गये हैं। लेकिन सरल मारग 'हनुमानचालीसा'वाला है। अब की जो पंक्ति है -

राम रसायन तुम्हारे पासा।

सदा रहो रघुपति के दासा।।

सीधा-सादा अर्थ है, राम-रसायन आपके पास है। और आप सदा-सदा रघुपति के दास है। दास बने रहे हैं। इस पंक्ति बहुत रहस्यमयी है। बहुत अर्थ होंगे। उसका दर्शन जरूरी है। 'रसायन' शब्द प्यारा है। पांच प्रकार के रसायण है। एक, धर्म-रसायन। दूसरा, नाम-रसायन। तीसरा, भक्ति-रसायन। चौथा, काम-रसायन। पांचवां, राम-रसायन। हमारे यहां एक पूरा शास्त्र है, रसायणशास्त्र। हमारे यहां 'रसायन' शब्द का प्रयोग क्यों किया है? बहुत सरल पड़ता था हमको औषधि कह देते, भेषज कह देते, दवाईयां कह देते। 'रसायन' शब्द बड़ा मूल्यवान है। रसायन का शाब्दिक अर्थ है रस का अयन। अयन का अर्थ है गति; यात्रा करना। जैसे 'रामायण', जिसमें राम की गति की कथा चलती है। 'अयन' का एक अर्थ है 'भवन', 'महल।' 'भागवतजी' 'रसालयम्' कहते हैं। रस का आलय। प्रधान अर्थ होता है अयन का गति। जड़ पदार्थ में अपने आप में अयन नहीं है। उसको सचेत करने के लिए कोई चेतना की जरूरत पड़ती है। लेकिन रस का स्वभाव गमन करना है। वे जगह मिलते ही गति करता है।

हमारे यहां वैदक में गोली के रूप में औषधि लेना, चूर्ण के रूप में औषधि लेना, भस्म के रूप में औषधि लेना और जो उसके प्रकार हो। सब से श्रेष्ठ माना है रसायन के रूप में औषधि लेना। और रसायन उसको कहते हैं जिससे पांच बस्तु की वृद्धि होती है। याद रखना श्रावक भाई-बहन, रसायन तो ही रसायन है। रसायन सेवन करनेवाले में पांच वस्तु की वृद्धि हो, बढ़ौती हो। उसको 'रसायन' का मूल स्वभाव माना गया है।

यहां तो आध्यात्मिक है, 'राम-रसायन।' तो बिलकुल आध्यात्मिक है, शिखर की बात है, लेकिन समझने के लिए स्थूल का आश्रय करना पड़ेगा। एक, रसायन का जो सेवन करेगा उसकी शक्ति वर्धन होती है। आपकी कमजौरी की मात्रा कम होने लगेगी। लेकिन हमारे मनीषी लोग, हमारे प्राज्ञपुरुष बहुत विचारक रहे मेरी दृष्टि में। वे कहते हैं कि कोई रसायण लेने से आदमी की शक्ति बढ़े, लेकिन स्फूर्ति न बढ़े तो? किसीका बहुत बड़ा शरीर हो, शक्ति बहुत हो, लेकिन वो आदमी खड़ा करे तब उठता हो, स्फूर्ति न हो! रसायन का दूसरा अर्थ है, शक्ति भी दे और स्फूर्ति भी दे। रसायन का सेवन करनेवाला स्फूर्त होगा। बहुत सचेत होता है।

रसायन देता है शक्ति। रसायन देता है स्फूर्ति। और तीसरा बहुत प्यारा सूत्र है, रसायन का सेवन करता है उसकी स्मृति बढ़ती है। प्राचीन गुरुकुलों में, तपोवनों में जो शिष्य गुरु के घर और गुरुकुल में रहते थे उसकी स्मृति-मेधा की वृद्धि करने के लिए सुबह-सुबह ये रसायन का सेवन करवाया जाता था। ताकि पढ़ी हुई विद्या स्मृति में स्थिर हो। हम ये पुराना सब भूल गये हैं! खेर! मेरी पचपन साल की यात्रा में मुझे सब याद होते हैं, किसका क्या नाम है? अब थोड़ा वो होने लगा है। अब इसीलिए होने लगा है कि ये सब नाम अब याद रखने की जरूरत नहीं! अब एक नाम याद रखो और वो हरिनाम। मुझे स्मृति है। क्योंकि मेरे दादा ने थोड़ा रसायन दिया था! ये सब निजी बातें है, लेकिन आप सब मेरे निजी है इसीलिए मैं कहने लगता हूं। हम और आप सब जिसके आश्रित है उसको कभी भूले ना। और इसीलिए मेरी स्मृति ये बनी रही है। दादाजी का एक स्मरण करना भी मेरे लिए एक पुण्य है ना भाई! उसका स्मरण मेरे लिए तीर्थस्नान है; बड़ी संपदा है।

तो, रसायन के जो कुछ लक्षण है मेरे भाई-बहन, एक तो वो शक्ति देता है, दूसरा स्फूर्ति देता है। तीसरा, स्मृतिवर्धन करता है। और चौथा फल माना गया है वो है तेज की वृद्धि करता है। तेज के साथ वर्ण भी

जोड़ा है कि रसायण का जो आदमी सेवन करे उसका तेज बढ़ता है और वर्ण बदलता है। वो योग में भी है, ध्यान देना, प्लीज़। योग में तो ज्यादा उसकी चर्चा है, कभी मैंने चर्चा की भी है। पांचवां रसायण का जो परिणाम है वो है क्रमशः चित्त की प्रसन्नता बढ़ती है; मेरा अनुभव ऐसा है आदमी को नागरवेल का पान खिलाने से थोड़ी प्रसन्नता आती है। नागरवेल के पान के रस में ऐसे कुछ तत्त्व-सत्त्व छिपा है, वो आदमी की प्रसन्नता में वृद्धि कर देता है। मेरे भाई-बहन, रसायन का ये पांचवां लक्षण है, चैतसिक प्रसन्नता की वृद्धि होती है। ये रसायन के पांच फल हमारे बूझर्गों ने बताये हैं, अनुभवियों ने बताये हैं।

नामवंदना के बाद गोस्वामीजी पूरी कथा की परंपरा उद्घोषित करते हैं। शिव ने ये रचना की, हृदय में रखा, समय पाकर पार्वती को दिया। सोलहसौ इकतीस की रामनवमी के दिन अयोध्या में इस कथा का संपादन हुआ। एक रूपक बनाया। हमारे शास्त्रों में रूपक बहुत है। भारतीय ज्यादा धार्मिक वाङ्मय रूपकों में संदेश देता है। वर्षा के देवता के रूप में हमने एक रूपक बना लिया मेघराजा, इन्द्र। एक रूपक स्थापित कर दिया धर्मजगत में। मृत्यु के देवता के लिए हमने रूपक निर्मित कर दिया यमराज। असुर और दुर्जनों के संहार करने के लिए हाथ में खडग लेकर अष्टभुजा दुर्गा-कालि एक सुंदर रूप ले दिया। हमको ऐसे माँ के दूध की तरह पिलाने की ऋषिमुनियों की ये बहुत प्यारी चेष्टाएं रही।

मानसरोवर का रूपक बनाया। 'रामचरित मानस' ये चलता-फिरता मानसरोवर है और ये तुलसी की देन है कि उसने चार घाट निर्मित किये। देखो, आचार्यों को पीठ अथवा मठ होते हैं। तुलसी न तो आचार्य है, न तो वो अपने आप को जगद्गुरु कहते हैं। तुलसी तो साधु है इसीलिए साधु को तो न मठ होता है, न पीठ होती है। साधु को घाट होता है और वो चार घाट होता है। एक शिक्षाघाट। उसका दूसरा घाट है दीक्षाघाट। साधु क्या करता है? रोटी देता है, भिक्षाघाट। और साधु का बहुत बड़ा महत्त्व का घाट होता है, कोई कितना ही बुरा करे, लेकिन वो क्षमा करता रहे वो क्षमाघाट। तुलसी ने चार घाट बनाये। तलगाजरडी व्याख्या में मुझे घाट का नाम देना है तो मैं ये दूं।

तो, साधु का एक घाट होता है शिक्षाघाट। वो शिक्षित करता है अपने मन को। 'राम भज सुनू सठ मना।' साधु का दूसरा घाट होता है बुद्धि को दीक्षित करना। बुद्धि बहुत अच्छी है, लेकिन दीक्षित होती है हरिनाम से। इसीलिए चैतन्य महाप्रभुजी ने कहा कि हरिनाम न हो तो विद्या विधवा है। साधु कर्म करता है, माधुकरी मांगता है, क्यों? दूसरों को रोटी देने के लिए। ये उसका भिक्षाघाट है। और साधु का चौथा घाट है जिसको मेरी जिम्मेवारी से मैं कहता रहता हूं ये क्षमाघाट है। चारों घाट बनाये। और ऐसी रामकथा का आरंभ गोस्वामीजी ने प्रपत्ति के घाट पर, गौघाट पर बैठकर अपने मन को सुनाना शुरू किया। और फिर लिये चलते हैं मन को तीरथराज प्रयाग के कर्मघाट पर। और फिर कथा का आरंभ होता है। भरद्वाजजी से याज्ञवल्क्य ने कहा कि आपने तो रामकथा पूछी है, लेकिन मैं आपको शिवकथा सुनाउं। और शंकर की कथा से रामकथा का आरंभ होता है।

मेरी समझ ऐसी दृढ बनती जा रही है कि 'हनुमानचालीसा' को जो आत्मसात् करता है वो सतजुगी नहीं रहता, वो त्रेतायुगी नहीं रहता, वो द्वापरयुगी नहीं रहता, वो कलियुगी नहीं रहता, केवल कथायुगी रह जाता है; केवल प्रेमयुगी रह जाता है। किसको युग का भान रहे? छोड़ो! युग की बातें भी बंधन है। 'युग' मानी दो; युग्म। और जहां दो होते हैं, वहां द्वैत होता है, वहां बंधन है। 'हनुमानचालीसा' का अनुसंधान आदमी को युगबंधन से मुक्त करता है। आदमी युगबंधन से बाहर निकले। चतुर्फल और चतुर् पुरुषार्थ से बाहर निकले। आदमी मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार से बाहर निकल जाय।

मानस-हनुमानचालीसा :: ४ ::

नाम-रसायन आदमी को स्वकेन्द्र से विश्वकेन्द्र की यात्रा कराता है

'मानस-हनुमानचालीसा', उस विशेष रूप में हम कुछ सात्त्विक-तात्त्विक संवाद कर रहे हैं। कल जिस पंक्ति का आश्रय इस कथा के लिए शुरू किया गया -

राम रसायन तुम्हारे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।

आपसे मेरी बात हुई कि रसायन पांच है। रसायनशास्त्र में तो कई रसायनों की चर्चा है। आयुर्वेद में भी मैंने थोड़ा जाना है इसीलिए कह रहा हूं कि मिलती है उसकी चर्चा। यहां हमारी जो बाते हैं हनुमंततत्त्व को आत्मसात् करने के लिए हनुमानजी के पास जो राम-रसायन है उसको सही रूप में जानना बहुत आवश्यक है। लेकिन धर्म-रसायन, काम-रसायन, भक्ति-रसायन, नाम-रसायन और राम-रसायन के नाते आ जाते हैं, उसका परिचय मेरी व्यासपीठ को आवश्यक लगता है। पहला पडाव धर्म-रसायन। धर्म जब तक सिद्धांत रहता है तब तक धर्म में संघर्ष होते रहते हैं। धर्म स्वभाव बने तब रसायन बनता है। एक मणि जिसका नाम है 'भानुमणि', 'सूर्यमणि'। तुलसी जिसको 'रविमणि' कहते हैं। मणि पदार्थ है, घन है लेकिन उस पर सूरज की किरण पड़ती है, तो वो सूर्यमणि द्रवीभूत हो जाता है। 'मानस'कार हस्ताक्षर करते हैं-

जिमि रवि मनि द्रव रथ हि बिलोकी।

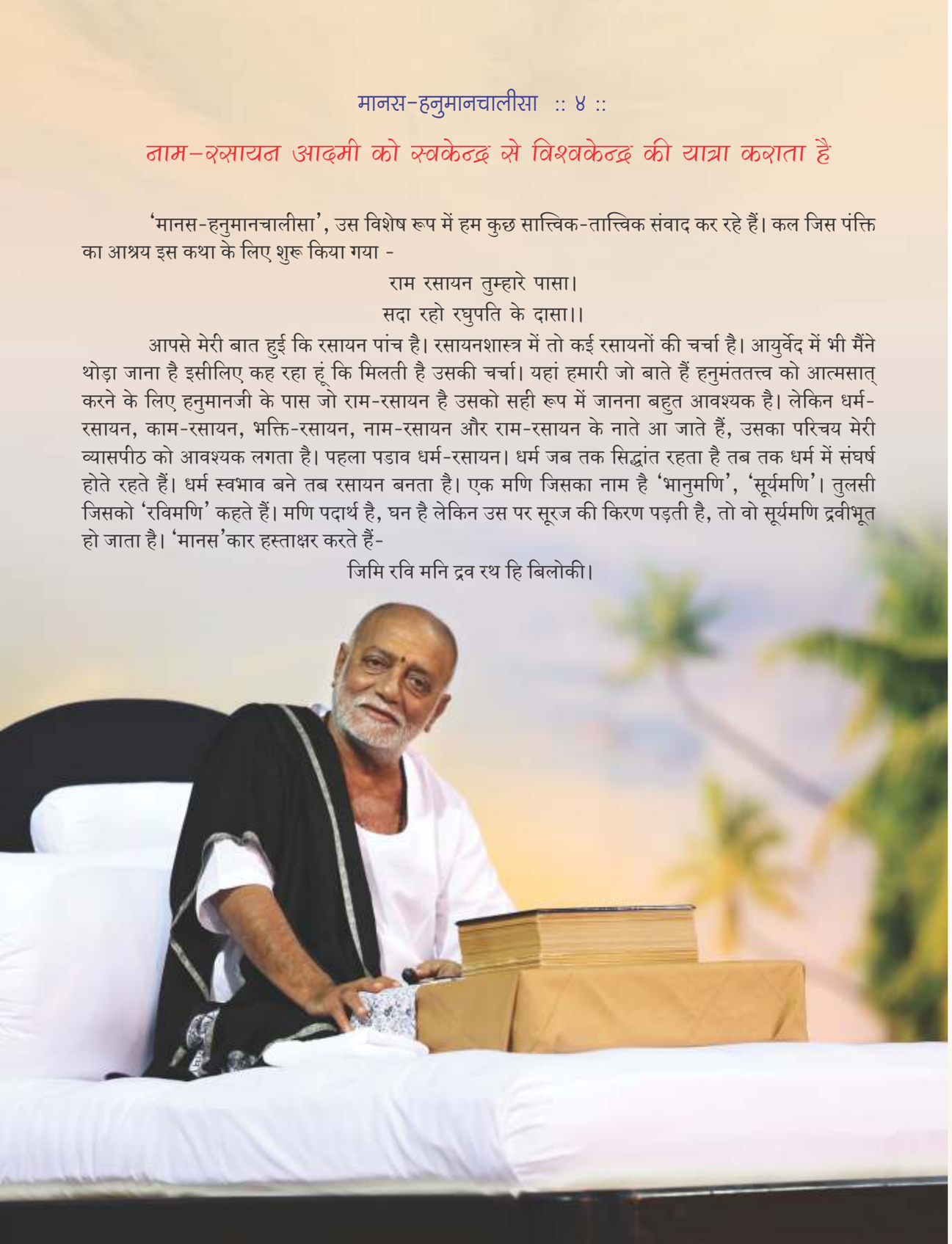

नरसिंह मेहता कहते हैं कि भक्ति पदारथ है। तुलसीजी कहते हैं, भक्ति मणि है। तो मणि भी पहले थोड़ा जड़ ही तो माना जायेगा, पदारथ ही माना जायेगा। यद्यपि नरसिंह मेहता ने भक्ति और प्रेम को पर्याय माना तो भक्ति को पदारथ भी कहा है, प्रेम को रस भी कहा है। तो भक्ति या तो प्रेम मणि है तो वो द्रवीभूत होता है। लेकिन अपने आप द्रवीभूत नहीं होता। उस पर सूरज की किरण आना नितांत आवश्यक है। तभी वो द्रवित होता है फिर रसायन शुरू होता है। मणि से रसप्रवाह शुरू हो जाता है। मुझे पहले कदम पर आपसे ये बातें करनी है कि धर्म-रसायन, धर्म का रस क्या है?, सत्य-प्रेम-करुणा ये धर्म-रसायन है। जरा सिरियसली सुनिए।

सत्य जब तक सिद्धांत है तब तक रसायन नहीं बन पाता। सत्य स्वभाव बनना चाहिए। हम लोगों ने सत्य को सिद्धांत बना दिया है। सिद्धांत आदमी को जकड़ लेता है। सिद्धांत आदमी को मेरी समझ में परवश करता है, स्वभाव आदमी को मुक्तता देता है। इसीलिए लाओत्सु कहता है, धर्म स्वभाव है। धर्म मानी सत्य स्वभाव होना चाहिए। प्रेम पदार्थ न रह जाय, सिद्धांत न रह जाय। 'परस्पर प्रेम करना चाहिए' ये सिद्धांत नहीं, ये स्वभाव है। प्रेम को भी सिद्धांत मत बनाना; वर्ना वो रसायन नहीं है। और करुणा को भी सिद्धांत मत बनाना, करुणा को भी स्वभाव बनाना। तब ये रसायन का रूप प्रकटता है। सत्य के ही बारे में सोचना, सच्चा ही सोचना ये सिद्धांत आया है। सत्य ही सोचना चाहिए ये हमारा स्वभाव बन जाये तो सत्य हमें हल्का-फूल्का रखेगा। सत्य दूसरों का स्वीकार करना उसको हम सिद्धांत बना देंगे तो जरा बोझिल हो जायेंगे। दूसरों के पास जो सत्य है, कुबूल करना मेरा स्वभाव है तो आदमी निर्भार रहेगा। मुझे जो आपसे बात करनी है वो सत्य रसायन बने। सत्य रस हो। राम सत्य है और इसीलिए हम एक शब्द का प्रयोग करते हैं, 'रामरस'।

तो धर्म-रसायन मानी तीन बस्तु-सत्य, प्रेम, करुणा। और ये तीनों सिद्धांत न बने रहे, रसरूप बने। अच्छी बात है, 'सिद्धांत' कोई बुरा शब्द नहीं मेरी दृष्टि में लेकिन सत्य को जब सिद्धांत मानते हैं तब रसायन नहीं है। मुझे याद रहा है कि लंडन में कथा थी, 'सर्वधर्म समभाव' की एक सभा थी। माधवाणी परिवार ने रखी थी। उसमें बड़े-बड़े महापुरुष सब बिलग-बिलग धर्म के आये थे एक मंच पर। उसमें मुझे भी जाने का अवसर मिल गया तो मैं भी गया। भारतीय संविधान के अनुसार धर्म के बारे में चर्चा शुरू हुई। तो, किसी ने कहा कि 'सर्वधर्म समान।' ऐसी-ऐसी बड़ी-बड़ी सुंदर वाक्पुष्पिता जिसको कहते हैं, वाणी के फूल। अच्छी बातें हम सुनते रहे और मुझे कहा गया कि कुछ कहे। मैंने कहा, नहीं, मेरे इतने बुझर्ग, पूजनीयगण बैठे हैं, मैं क्या बोलूं? बोले, नहीं, आप भी कुछ कहो। तब मैंने कहा, अब तो ये मेरा वाक्य चुरा लिया गया है! और वहां बैठे थे वो सब ही यूझ कर रहे हैं अपने नाम से! वो तो उनकी सत्य ग्रहण करने की हिंमत! तब मुझे बराबर याद है कि मेरे गुरु ने मुझे बुलवाया था कि सब धर्म सन्मान हो। सब धर्म समान नहीं हो सकते। क्योंकि धर्म सब है ही नहीं, धर्म सब है ही नहीं, धर्म एक ही है। ठीक है व्यवस्था के नाम पर हिन्दुधर्म, इस्लाम धर्म, ईसाई धर्म, बौद्ध, जैन ये बहुत अद्भुत परंपरायें है अपने-अपने इस मारग से परमतत्त्व को पाने के लिए। लेकिन समानता सबमें है कि केवल खुशामत है? तुलसी 'मानस' में कहते हैं कि 'राम समान प्रभु नाहि कहूं। राम समान कोई नहीं।' और राम है धर्म। सबकी अपनी-अपनी बिलग पहचान होती है। एक धर्म कहता है कि गाय को पालो वो धर्म है। एक धर्म कहता है कि गाय को काटो वो भी धर्म है! आप समान कैसे कह सकोगे? जरा विवेक से सोचना चाहिए। एक धर्म कहता है कि तुम्हारा न माने उसकी हत्या कर दो, परमात्मा के प्यारे हो जाओगे! एक धर्म कहता है कि अहिंसा परम धर्म है। समान सूत्र तो मिलते नहीं! सब धर्म समान नहीं हो सकते। हाथ का धर्म पैर का धर्म नहीं हो सकता। पैर का धर्म आंख का धर्म नहीं हो सकता। सब अंग के धर्म बिलग है।

धर्म जब स्वभाव बनेगा तब हमारे प्रत्येक व्यक्ति के मन में एक रसायन पैदा होगा ये रसायन हमें सबको सन्मान देना सिखायेगा। सिद्धांत तो कभी-कभी कट्टरता लाता है। अरे, ओर धर्मों की बात छोड़ो ना! भारतीय धर्मो में भी ये वैश्नव, ये शैव, ये फल्लां, ये फल्लां और कुछ नये-नये वो निकले हैं! कुछ समय वो भी

अपना-अपना आलाप करते हैं! वडलो अने भींडो, बेयने सन्मान अपाय, बेयने समान नो के'वाय! भारतीय धर्म का प्रतीक है वटवृक्ष। उसकी शाखाओं पर कई आशियानें हुए हैं। पंख मिली है, उड़ान भरी है। और अपनी-अपनी यात्रा पर निकले है। सन्मान सबको दो। अब एक धर्म कहता है कि दिन में तीन बार नहाओ; और एक धर्म कहता है कि नहीं, पूरा नहाने की जरूरत नहीं, हाथ-मुंह धो लो, काम हो जायेगा! एक धर्म कहता है, जिंदगीभर न नहाओ, नहाने की जरूरत ही नहीं; और एक धर्म कहता है कि रोज धोए कपड़ें पहनो। कैसे समान कहे? फिर भी जो धर्म कहे कि नहाने की जरूरत नहीं उसको भी सन्मान दो। मैं देता हूं। दिल से देता हूं, हां। हिन्दु-मुस्लिम हम सब मिलकर तकरीर करते हैं। ये काम कबीर ने किया था। इस देश में सबसे ज्यादा इस पर काम किया है तो सद्गुरु कबीरसाहब ने किया है। और दिल से किया है, राजी करने के लिए नहीं।

एक व्यक्ति के प्रत्येक अंग के धर्म भिन्न है। उसको आप एक नहीं कर सकते। हां, ये प्रत्येक धर्म को एक के शरण में रख सकते हैं। 'सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।' तेरे कान का धर्म श्रवण है, मेरे वचन सुन। तेरी जबान का धर्म बोलना है, 'वाणी गुणानुकथने' मेरा हरिनाम बोल। वहां 'सर्वधर्मान्' की बातें है वो कई अर्थों में आई है। हम और आप प्रत्येक को सन्मान दे। और जहां सत्य, प्रेम, करुणा का रसायन है वो सब धर्म अपना है। और सबको अपना धर्म रखना चाहिए। मैं बिलकुल खूला हर जगह कहता हूं कि सबको अपने धर्म में निष्ठा रहनी चाहिए। 'स्वधर्मे निधनं श्रेयः', वहां कृष्ण ने 'हिन्दुधर्मे निधनं श्रेयः' ऐसा नहीं कहा है। नरसिंह मेहता ने कहा है, 'आपणे आपणा धर्म संभाळवा।' जिसके जीवन में धर्म रसायन बन जाता है वो सबको सन्मान देगा; वो सबको दिल से आदर देगा।

मेरे भाई-बहन, ये संसार धर्म-रसायन के रूप में जीवन में आयेगा तो जगत बड़ा प्यारा लगने लगेगा। आलोचना नहीं होगी। सत्य जिसका रसायन हो गया वो असत्य बोलनेवाले की निंदा भी नहीं करेगा। प्रेम जिसका रसायन बनेगा तो नफरत और घृणा करनेवाले के सामने मुस्कुरा देगा। रसायन बनाओ धर्म से। तब संसार सुंदर लगेगा। 'विनयपत्रिका' में तुलसीदासजी ने चार सूत्र दिये हैं।

सम संतोष दया विवेक ते।
व्यवहारी संसारी सुखकारी।
हे हरि यह भ्रम की अधिकाई।
अनविचार रमणीय सदा
जगत भयंकर भारी।

लेकिन अंदर उजाला हो जाय तो? संसारी भी मौज कर सकता है। जिसको चार बस्तु आ जाये। चार बस्तु मैं और आप सीखने की कोशिश करें। मेरे भाई-बहन, सम। कठिन जरूर है, लेकिन है भी नहीं थोड़ा उजाला हो जाय तो। प्रत्येक अवस्था में समता रखना। समता पकड़े रखो, ये दुनिया सुखाकारी है। क्योंकि निष्फलता-सफलता सापेक्ष है। उसका स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है।

मेरे युवान भाई-बहन, परमात्मा आप सबको सफल ही करे। लेकिन रोज प्रार्थना करना; धंधे में लाभ हो ये भी मैं मना नहीं करता लेकिन ये कहो, हमारे धंधे में हमारा शुभ हो। नई प्रार्थना करो। लाभ हो नहीं, हमारा शुभ हो। तो लाभ तो शुभ के पीछे-पीछे दौड़ आयेगा। सम की बातें तो 'भगवद्गीता' ने तो बहुत की। सुख में और दुःख में सम रहना, बस। मैं आपसे एक बात कहूं, एक मुठ्ठी नमक, एक प्याला पानी लो। उसमें नमक डालो और पीओ। कैसा लगेगा? खारा लगेगा न? लेकिन उसके बाद एक दूसरा प्रयोग करो आप कि आपके घर में स्वीमिंग पूल है, इतना ही मुठ्ठी नमक स्वीमिंग पूल के ब्ल्यू रंग के पानी में डाल दो। फिर वो पानी पीओ। कैसा लगेगा? खारा नहीं लगेगा न? दुःख तो दुःख है! तुम किस पात्र में डालते हैं, उसमें तुम सुखी और दुःखी हो जाते हो। दुःख की मात्रा सदा सम है।

'जग खारा...जग खारा... जग खारा!' विशाल हो जाओ। तुलसी कहते हैं, अनविचार के कारण आपको ये सब भयंकर संसार अभी रमणीय लगता है। लेकिन सही में वो ही भयंकरता आपको 'व्यवहारी सुखकारी' संसार सुख देनेवाला लगेगा। कब? 'सम संतोष दया विवेक ते।' तुम्हारी बेटी और तुम्हारी बहु उसमें तुम सम रहो तो जगत भयंकर नहीं है। जगत सुंदर है। बाप-बेटे,

मित्र-मित्र, पति-पत्नी, श्रोता-श्रोता, सम रहे। मैं आपको प्रमाण तो क्या दूं, लेकिन सुख-दुःख में सम रहता है उसको कभी पीड़ा नहीं होती। 'हनुमानचालीसा' की चौपाई याद रखना -

संकट हरे मिटै सब पीरा।
जो सुमिरे हनुमंत बलबीरा।।

हमें क्यों पीडा होती है मेरे भाई-बहन? हम पात्र बड़ा नहीं बना पा रहे हैं! गिलास के पानी में नमक डाले जा रहे है! थोड़ा पात्र विशाल बना लिया जाय। तीन बस्तु में सम रहेना। एक तो सुख-दुःख में सम रहना। नरसिंह मेहता तो कहता है -

सुख दुःख मनमां न आणीये,
घट साथे रे घडिया ...

अब देखो, नरसिंह यहां वेदांत से बिलग हो रहा है। सुख-दुःख तो शास्त्र कहता है, मन से जुड़ा हुआ है! नरसिंह कहते हैं नहीं, 'घट साथे रे घडिया।' घट मानी हृदय। घट मानी मन नहीं। और नरसिंह मेहता बड़ा वेदांती है। वेदांती नहीं होता तो ये न कह सकता -

ब्रह्म लटकां करे ब्रह्म पासे।
जागीने जोउं तो जगत दिसे नहीं।
ऊंघमां अटपटा भोग भासे।

नरसिंह बड़ा वेदांती है, लेकिन साधु का अपना अनुभव आता है तब वेदांत के शब्दार्थ में नहीं रहता। अपने स्वभाव का सत्य उद्घोषित करता है कि सुख-दुःख आदमी के घट से जुड़ा हुआ है; सापेक्ष है। तो एक, सुख-दुःख। दूसरा, शीतोष्ण। ठंडी-गर्मी, सम रहो। ठंडी सुख दे, गर्मी दुःख दे ऐसा यदि है तो तो सापेक्ष नहीं है। लेकिन है सापेक्ष। ठंडी के दिनों में दुःख देनेवाली गर्मी सुख देती है। और गर्मी के दिनों में ठंडी सुख देती है। मौसम बदलती है, सुख-दुःख की परिभाषा। और अनुभूतियां बदल जाती है। इसीलिए सुख-दुःख मनमां न आणो, घटमां राखो। ये बहुत पुराना सूत्र है व्यासपीठ का, या तो सब कुछ सद्गुरु पर छोड़ दे, या तो सद्गुरु को ही छोड़ दो। कोई उपाय नहीं है इसके अलावा।

मैं फिर अपनी बात लाता हूं क्योंकि आप मेरे अपने हैं। संसार में दुःख तो होते हैं, परेशानियां तो होती है। किसको नहीं होती? लेकिन मैं इतना मौज कर सकता हूं! एक ही कारण है, मैंने सबकुछ त्रिभुवनबाबा पर छोड़ दिया है। और मेरा सद्भाग्य है कि मुझे उसने ये कहा था कि बेटा, मेरा गुरु जीवनदास दादा है। हमारे साधु में क्या होता है, मैं राज़ खोल दूं। हमारे साधु में गुरु परंपरा में कोई दूसरा नहीं होता। हमारे चाचा होते है वो गुरु बन जाते है। ये प्यारी रचना है। बाप बड़ा है, लेकिन गुरु छोटा बन जाता है। इसका मतलब समाज को प्रमाण देते हैं कि बाप से भी बड़ा गुरु है। भले छोटा हो उम्र में। परंपरा तो यही रही। आज मुझे प्रश्न पूछा है कि बापू, आपके दादा के गुरु कौन थे? तो मुझे अवसर मिल गया। दादाजी ने मुझे कहा कि बेटा जीवनदास दादा, उसको मैं गुरु मानता हूं और ध्यानस्वामी बापा को सद्गुरु मानता हूं। लेकिन मुझे बहुत गौरव और आनंद है, मुझे कहा, तू मुझे सद्गुरु मानना। जिस आदमी चौबीस घंटों में किसी से बात नहीं करता था वो आदमी मुझे ऐसा क्यों कहे कि मुझे ये मानना। इसका संकेत था कि या तो सद्गुरु को छोड़ दो, या तो सद्गुरु के उपर सब कुछ छोड़ दो। वर्ना इसको मुझे ये कहने की जरूरत थी? न कंठी बांधी है, न फूंक मारी है, कान में कुछ नहीं किया। विश्व की सबसे बड़ी दौलत दे दी। जिसके सामने सब मुझे रांक लगते हैं! यकीन करियेगा। किसी बुद्धपुरुष पर सब कुछ छोड़ना होता है। ये भरोसा न हो तो सद्गुरु को छोड़ दो!

भक्ति-रसायन की चर्चा करूंगा तब आपसे ओर बाते करूंगा। लेकिन भक्ति-रसायन के बारे में ऐसा लिखा है कि भक्ति तो तभी रसायन बनती है जब गर्भ से आती है। आचार्यों से आनेवाली भक्ति सिद्धांत सिखाती है, माँ की कूख से आनेवाली भक्ति रसायण बनती है। तुलसीदासजी ने प्रह्लाद को भगत नहीं कहा, क्या कहा है? 'भगतशिरोमणि प्रहलादू।' शिरोमणि क्यों? क्योंकि उसको गर्भ से भक्ति-रसायन नारद ने पाया था। गर्भ में कोई विधि नहीं होती। प्रह्लाद की भक्ति गर्भ से है। मेरी समझ में नहीं आता है, क्या भक्ति के सिद्धांत होते हैं? भक्ति भी स्वभाव हो। मैं सिद्धांत का विरोधी नहीं हूं, लेकिन 'सिद्धांत' शब्द मुझे ज्यादा जचे नहीं। और तीसरी बहुत महत्त्व की समता।

निंदाअस्तुति उभय सम ...

साधुपुरुष सम रहता है। और साधु होने का सबको अधिकार है। अंदर से सब साधु भी है; साधुपना खुला नहीं है। गुरु क्या करता है? दबा हुआ साधुपना खोल देता है और साधक का अंदर का दीप जल जाता है। कोई निंदा करे, कोई स्तुति करे, क्या फर्क? समझ को बहुत परिपक्व करनी पड़ती है। निंदा करनेवालों को सत्य समझ में आयेगा तो वो ही स्तुति करेगा! स्तुति करनेवालों की चाह पूरी नहीं होगी तो वो ही निंदा करेंगे! ये तो दुनिया का रिवाज है!

कुछ तो लोग कहेंगे, लोगों का काम है कहना।
छोड़ो बेकार की बातें कहीं बीत न जाये रैना।

सुंदर जीवन कहीं बीत न जाये! निंदा-स्तुति में सम रहना। सूत्र तुलसी ने 'विनयपत्रिका' में दिया 'संतोष।' बड़ा प्यारा सूत्र है। पूरा प्रयत्न करो अपने धंधे में, लेकिन रिझल्ट में संतोष प्राप्त करो। तुमने पूरेपूरा प्रामाणिक प्रयास किया है और फिर भी तुमने चाहा इतना नहीं आया परिणाम तो रोना नहीं, संतुष्ट होओ। पूरा-पूरा उसने नहीं दिया, उसकी जेब में रख दिया होगा, जब जरूरत पड़ेगी तब दे देगा। 'भगवद्गीता' में लिखा है, 'संतुष्ट सततं योगी।' 'मानस' में 'आठव जथा लाभ संतोषा।' भक्ति बताई है।

तीसरा सूत्र है, दया। दया मानी करुणा। दया धर्म का एक चरण माना गया है। सत्य, तप, दया, दान। तो, मेरे भाई-बहन, संतोष, दया और विवेक। सत्संग के द्वारा प्राप्य विवेक से आदमी रस भयंकर संसार को अनविचार के कारण रमणीय लग रहा है वो जब सद्विचार आने लगेगा तब सही में सुखकारी लगेगा।

तो, मेरे भाई-बहन, एक रसायन है धर्म-रसायन। केवल सिद्धांतों में धर्म को न रखे, केवल शब्दार्थों में न रखे तो धर्म रसायन होगा। दूसरा रसायन है, भक्ति-रसायन। भक्ति-रसायन भी हमें शक्ति देता है, स्फूर्ति देता है, स्मृति देता है, पवित्रता बढ़ाता है और जीवन की तेजस्विता में बढ़ोतरी करता है। तीसरा रसायन है, काम-रसायन। रसायन के रूप में उसको कुबूल करना पड़ेगा, क्योंकि काम चतुर्पुरुषार्थ में एक जगह रखता है। उसका अनादर न किया जाय। लेकिन काम-रसायन के कारण शक्ति कम होती है! लगता है एक प्रकार की ऊर्जा पैदा हो जाय, लेकिन तत्त्वत: धीरे-धीरे शक्ति क्षीण होती है। भर्तृहरि महाराज ने कहा, भोग कभी भोगा नहीं जाता, आदमी खुद भोगता जाता है। मृत्यु किसी के पास नहीं जाती, आदमी स्वयं मृत्यु के पास जाता है। ऐसी भर्तृहरि महाराज ने कुछ बातें कही है। काम-रसायन में स्फूर्ति भी नहीं रहती। काम-रसायन स्मृति का लोप करता है धीरे-धीरे। हमारे यहां ब्रह्मचर्याश्रम क्यों आया भारत की पद्धति में? ये बड़ी अद्भुत पद्धति रही। क्योंकि एक अवस्था में गलत रसायन का सेवन हो गया तो तुम्हारी स्मृति का लोप हो जायेगा। काम-रसायन के कारण तेज कम होता है। आदमी निस्तेज बनने लगता है। और पवित्रता और प्रसन्नता तो कम हो ही जाती है।

चौथा है नाम-रसायन। और कलियुग है नाम-रसायन का समय। मैं बार-बार कहता हूं कि कोई नाम का दबाव नहीं। जिसके दिल में जो नाम रास आये। तो ये कलियुग नाम-रसायन की मौसम है। जो नाम लेगा उसको बहुत शक्ति मिलेगी। जो नाम लेगा उसकी स्फूर्ति आठों प्रहर रहेगी। जो नाम लेगा उसका तेज बढ़ेगा। जो नाम लेगा उसकी स्मृति बहुत पवित्रता को बढ़ाती हुई आगे बढ़ेगी। घूमघूमकर मैं नाम पर आ जाता हूं, क्योंकि 'ये ही मह रघुपति नाम उदारा।' तत्त्वत: 'मानस' में क्या है? राम का नाम है। प्रभु का नाम है। फिर ये वक्तव्य मैं आपके सामने रखता हूं कि जो साधना में आपकी रुचि हो जरूर करिए, लेकिन नाम-रसायन मत छोड़ना। हम माला पर नाम क्यों जपते हैं उसका आपको पता है? मैं तो कोई आग्रह नहीं रखता, लेकिन सब लोग माला क्यों पसंद करते हैं? माला पर जाप करनेवाले संकेत समझे, परिवार को जोड़ के रखो। परस्पर प्रेम रखे। और माला का मेरु सद्गुरु होता है, उसका कभी अतिक्रमण न करो। भूल से भी सद्गुरु के पास कभी वादा मत करना। वादा किया तो निभाना। माला बड़ी वैज्ञानिक वस्तु है। और करीब-करीब आप जानते होंगे हर एक धर्म में माला की महिमा है। सभी सयाने एक मत। इस्लाम धर्म में तसबीह रखते हैं। गुरुनानक में 'जपूजी' जपने वाले ये भी माला, है धागे की, कपड़े की या तो कुछ भी हो। लेकिन माला का आश्रय करते हैं। जैनों में नवकार गिनते हैं। बुद्ध को माननेवाले जो घूमाते रहते हैं। कबीरसाहब की एक साखी है -

माला फेरत जग मुआ गया न मन का फेर।

क्या अर्थ है उसका? कुछ लोग जो माला के विरोधी होते हैं वो ऐसा कहते हैं कि कबीर सा'ब ने माला की आलोचना की है। अरे! कबीर उसको कहो, जो कभी किसी की आलोचना न करे। निंदा करे वो कबीर नहीं, निदान करे वो कबीर। लोग कहते हैं-

माला फेरत जग मुआ गया न मन का फेर।
कर का मनका डारिके मन का मनका फेर।

सीधा अर्थ लोग ऐसा लगाते हैं कि माला फेरते-फेरते जगत मर गया फिर भी कुछ नहीं हुआ। कबीरसाहब कुछ ओर संकेत करते हैं कि 'माला फेरत जग मुआ।' माला फेरते-फेरते जगत उसको नश्वर दिखाई देने लगा कि नाशवंत जगत है, नाम-रूप नाशवंत है, केवल हरि का नाम ही शाश्वत है। ये समझ आ गई। जगत नष्ट करना नहीं पड़ा। 'कर का मनका डारिके ...' मतलब कि निरंतर जप करनेवाले शरीर की एक अवस्था है, शरीर की एक सीमा है, कभी तेरी ऊंगली थक जाय, कभी तेरा हाथ थक जाय, बूढ़ापा ये तेरे शरीर में प्रकंप आ जाये और तू माला ठीक से न कर सके तो साधक, गिला मत करना। 'मन का मनका फेर', तू अंदर की माला फेर ना! माला की आलोचना नहीं है। माला को सिद्ध किया है। माला को प्रस्थापित की है। लेकिन हम अपने ढंग से अर्थ निकाल देते हैं! माला का अर्थ है संयुक्त रहो जहां तक हो। व्यवस्था के लिए तुम जैसे रहो लेकिन मन से संयुक्त रहो। गुरु की बातों को माला की गांठ समझो, उसको पकड़ रखे।

नाम-रसायन में, मैं ओर तो क्या कहूं साहब? बाकी एक वस्तु तो पक्की है कि नाम-रसायन से शक्ति बहुत आयेगी, बहुत आयेगी, बहुत आयेगी। मुझे फिर दादा का एक स्मरण याद आ रहा है। एक शाम मैं चाय देने गया था, तो चाय पीते-पीते बोले कि बेटा, चौपाई का उत्तरोत्तर ज्यादा अर्थ तुझे बिना प्रयास समझ में आयेगा। और मैं ये अनुभव कर रहा हूं। बुद्धपुरुष क्या कर नहीं सकता साहब? या तो उस पर सब कुछ छोड़ दो, या उसको छोड़ दो। बेईमानी न की जाय! मैं कहां काशी पढ़ने गया? तीन बार मेट्रिक में नापास हुआ आदमी हूं! मेरे पास लोग आते हैं, व्यासपीठ पर पीएच.डी. करना है। सोचो। नाम प्रताप। कोई कहे कि प्रमाण क्या है? नाम क्या कर सकता है? तो मेरा नाम बता देना। और ये मैं अपने बल से नहीं कह रहा हूं, वो बुद्धपुरुष के शब्दों के आधार पर कह रहा हूं। एक भरोसा है। नाम पकड़े रखो साहब। माला, मालामाल कर देगी! आदमी को धन्य-धन्य कर देगी। ब्रजवासी क्या पढ़े थे? कबीरसाहब क्या पढ़े थे? जिसस क्राईस्ट क्या पढ़े थे? महंमद पयगंबरसाहब कितना पढ़े थे? सबका इतिहास देखो। लेकिन इन लोगों ने कुछ ऐसा तत्त्व पकड़ लिया था, जिस तत्त्व से जीवन कुछ बिलग निखर आया! एक करोड रूपये का हीरा हो आपके पास मान लो, लेकिन ये हीरा हीरे के रूप में ही रहेगा और आपको भूख लगेगी तो हीरे से भूख की निवृत्ति नहीं होगी। इस हीरे का मूल्य जानकर उसको रोटी में रूपांतरित करने से रोटी से पेट भरता है। हीरा मुंह में चूसने से बात नहीं बनेगी। मैं तो वहां तक

मुझे लगता है कि जो नाम का रसायन पिएगा वो शुरूआत में स्वकेन्द्री ही रहेगा। मेरा धंधा, मेरा काम, ये, ये...! अपना संसार संभाल कर बैठे और हरिनाम ले। लेकिन जैसे-जैसे ये रसायन का ज्यादा सेवन किया जाएगा उसके बाद स्वकेन्द्री से आदमी हो जायेगा स्वजनकेन्द्री। उसके बाद नामजप आदमी करता रहता है तो उसका एक तीसरा केन्द्र आता है वो है समाजकेन्द्र। फिर समाज की सेवा करेंगे। आदमी धीरे-धीरे समाजकेन्द्री हो जायेगा। और मुझे कहने दो, जिन-जिन लोगों ने नाम-रसायन पीया है वो विश्वकेन्द्र में पहुंच जाते हैं। नाम-रसायन आदमी को विश्वकेन्द्री बना देता है; स्वकेन्द्र से विश्वकेन्द्र की यात्रा कराता है।

मानता हूं कि हमें जीव से शिव भी नहीं होना है। जीव ही रहना है। जीव रहे बस, लेकिन जीना सीख ले।

कोई आये और जीने की अदा ले जाये।
फिर खुदा जाने किधर हवा ले जाये।

मक्खी को गरुड होने की जरूरत नहीं, मक्खी, मक्खी पर्याप्त है। जीव, जीव पर्याप्त है। किसी उपलब्धिओं से महानता मिले वो खाक् उपलब्धि है! मैं मक्खी का दृष्टांत समझकर दे रहा हूं। मक्खी पत्थर पर बैठती है तो जब चाहे उड़ सकती है। मुक्त है। लेकिन पत्थर पर बैठने से मक्खी को स्वाद प्राप्त नहीं होता है, मुक्ति मिलती है। और स्वाद न मिले और मुक्ति मिले वो खाक मुक्ति? मक्खी वहीं से उड़कर एक गंदकी पर बैठती है। तो क्या होता है कि वहां वो मुक्त हो सकती है, लेकिन गंदकी पर बैठने से थोड़ा स्वाद मिल सकता है, वो स्वाद नहीं है। वो विकार है। वो ही मक्खी उड़कर मध पर बैठ जाये तो पैर चीपक जायेगी लेकिन स्वाद आयेगा, मुक्ति नहीं, अब उड़ नहीं पायेगी। तो, कहीं मुक्ति है तो स्वाद नहीं है। कहीं बंधन है, स्वाद है तो बेसूरा स्वाद है। कहीं प्यारा स्वाद है तो मुक्ति नहीं है। लेकिन वो मक्खी एक साकर पर बैठ जाय तो? मुक्ति भी है और स्वाद भी है। 'रामनाम' साकरनो गांगडो छे। उस पर बैठो तो मुक्ति ही मुक्ति है और स्वाद ही स्वाद है। तो, प्रभु का नाम ऐसी मधुरता है। मुक्ति भी देता है और स्वाद भी देता है। मेरे पास फराज़ साहब का एक शे'र है -

जुदा रखा है अब तक हमको इस आश ने फराज़।
कभी तो मोजिज़ा होगा और आप हमें मिल जायेंगे।

मोजिज़ा मानी चमत्कार। हम सब तेरे इन्तज़ार में बैठे हैं। कभी तो चमत्कार होगा। आज पुकारा, कल पुकारा। जिसस कहते हैं, दरवादा खटखटाओ, कभी न कभी खोलेगा। दीदार हो जायेगा।

और मेरे अनुभव में मुझे लगता है कि जो नाम का रसायन पिएगा वो शुरूआत में स्वकेन्द्री ही रहेगा। नाम जपता ही रहेगा। लेकिन अपने बारे में ही सोचेगा। लेकिन नाम-रसायन जैसे-जैसे नस में चढ़ेगा, केन्द्र बदलता जायेगा। अनुभव करना। आरंभ में नाम-रसायन स्वकेन्द्री बनाता है। मेरा धंधा, मेरा काम, ये, ये...! ये भी अच्छा है कि दूसरे की झंझट में न पड़े। अपना संसार संभाल कर बैठे और हरिनाम ले! लेकिन नाम आदमी को एक जगह नहीं रहने देता। उसका उत्कर्ष करता है। जैसे-जैसे ये रसायन का ज्यादा सेवन किया जाएगा उसके बाद स्वकेन्द्री से आदमी हो जायेगा स्वजन केन्द्री। मेरे परिवार के लोग, मेरे पड़ौशी के लोग ये सब की सोचेगा कि मुझे नाम का आनंद आया, शायद इन लोगों को भी आये। शायद वो भी थोड़ी-सी घूंट पी ले। लेकिन केन्द्र बदलता है नाम; अवश्य बदलता है। स्वकेन्द्र से स्वजनकेन्द्र में उसके बाद नामजप आदमी करता रहता है तो उसका एक तीसरा केन्द्र आता है वो है समाजकेन्द्र। फिर समाज की सेवा करेंगे। साधु नाम भी जपेगा, कहीं भूकंप आया वहां भी पहुंच जायेगा। कभी सुनामी आई, वहां भी पहुंच जायेगा। कोई भूखा होगा, पंगत लगा देगा। आदमी धीरे-धीरे समाजकेन्द्री हो जायेगा।

और मुझे कहने दो, जिन-जिन लोगों ने नाम-रसायन पीया है वो विश्वकेन्द्र में पहुंच जाते हैं। क्योंकि नाम वैश्विक बनाये बिना रह नहीं सकता। गांधीबापू ने सत्याग्रह किया, वकालत की ये ओर बात है, लेकिन केन्द्र में नाम गुंजता रहा था। गांधी का समग्र विकास यदि मेरा व्यक्तिगत अभिप्राय मैं जो देना चाहूं तो कहूंगा, ये नाम-रसायन का विकास है। आदमी विश्वकेन्द्री बन गया। युनो को 'अहिंसादिन' मनाना पड़े दूसरी अक्टूबर को! नई तालीम, ग्रामोद्धार क्या-क्या प्रयोग करवाया इस महापुरुष ने? वैश्विक आदमी ने? लेकिन मैं तो नाम-रसायन के पथवाला आदमी हूं तो मुझे तो गांधी में वो नाम का प्रभाव ही दिखता है।

तो, नाम-रसायन आदमी को विश्वकेन्द्री बना देता है। स्वकेन्द्र से विश्वकेन्द्र की यात्रा कराता है। विनोबाजी स्वकेन्द्री ही थे। हिमाचल चला जाना था उसको। बस मोक्ष, मुक्ति। बीच में गांधी मिल गये साहब! धीरे-धीरे स्वजनकेन्द्री हो गये। फिर आगे बढ़े समाजकेन्द्री हो गये। और फिर महामुनि विनोबा आज 'जय जगत' का नारा दुनिया को दे रहे हैं। विश्वकेन्द्री बन गये। युवान भाई-बहन, खूब मौज करो, आनंद करो, लेहर से जीओ, लेकिन थोड़ा समय मिले तब नाम-रसायन लो, नाम का आश्रय करो।

मानस-हनुमानचालीसा :: ५ ::

राम-रसायन है 'रामचरित मानस'

आज की कथा में, आज के संवाद में प्रवेश करें इससे पूर्व दो बातें; एक तो जिसका कल व्यासपीठ से हम सबने मिलकर स्मरण किया था, आज श्रीमन् महाप्रभु जगद्गुरु वल्लभाचार्य भगवान का प्राकट्य दिन है। वैश्नव जगत को ही नहीं, समग्र विश्व को महाप्रभुजी के प्राकट्य दिन की भूरिश: बधाई हो, बधाई हो, बधाई हो। सबको जयश्री कृष्ण। जब-जब देश-काल और पात्र के अनुकूल नए विवेक-विचार की जरूरत संसार को पड़ी तब कोई आचार्य हमारे यहां आये। और बहुधा आचार्य साउथ से ही आये हैं। अवतार उत्तर भारत से आये हैं। यद्यपि उसके लिए कोई एक भूगोल का टुकड़ा मजबूर नहीं कर सकता उनको। ये तो कहीं भी प्रकट हो सकते हैं, लेकिन भक्ति का उत्पत्ति स्थान द्रविड देश बताया है। खास करके भक्तिमारग के आचार्य तो दक्षिण से ही आये हैं। मैं महाप्रभुजी को मानसिक रूप में दंडवत् करता हूं। वल्लभविचार तो शाश्वत है। लेकिन 'मानस' का गायन करता हूं इसलिए मैं कुछ कहना चाहता हूं तो वल्लभाचार्य भगवान के इष्ट तो श्रीकृष्ण है, श्रीनाथजीबावा है। तुलसी के इष्ट तो राम है। यद्यपि काल में थोड़ा भेद है। लेकिन मैं इस तरह सोचता हूं आचार्यो के बारे में तब मुझे लगता है कि तुलसीदासजी भी कृष्ण की बातें, प्रत्यक्ष नहीं, लेकिन परोक्ष रूप में 'मानस' में ज्यादा करते हैं, ज्यादा करते हैं, ज्यादा करते हैं।

आज-कल नाममहिमा का प्रवाह थोड़ा विशेष मेरे दिमाग में चल रहा है। तो, तुलसीदासजी ने जब 'नाम महिमा' 'मानस' में गाया, लिखा तो 'नाममहिमा' का आरंभ तुलसीदासजी ने अयोध्या से नहीं किया, गोकुल से किया। यद्यपि क्रम में अहल्या से किया।

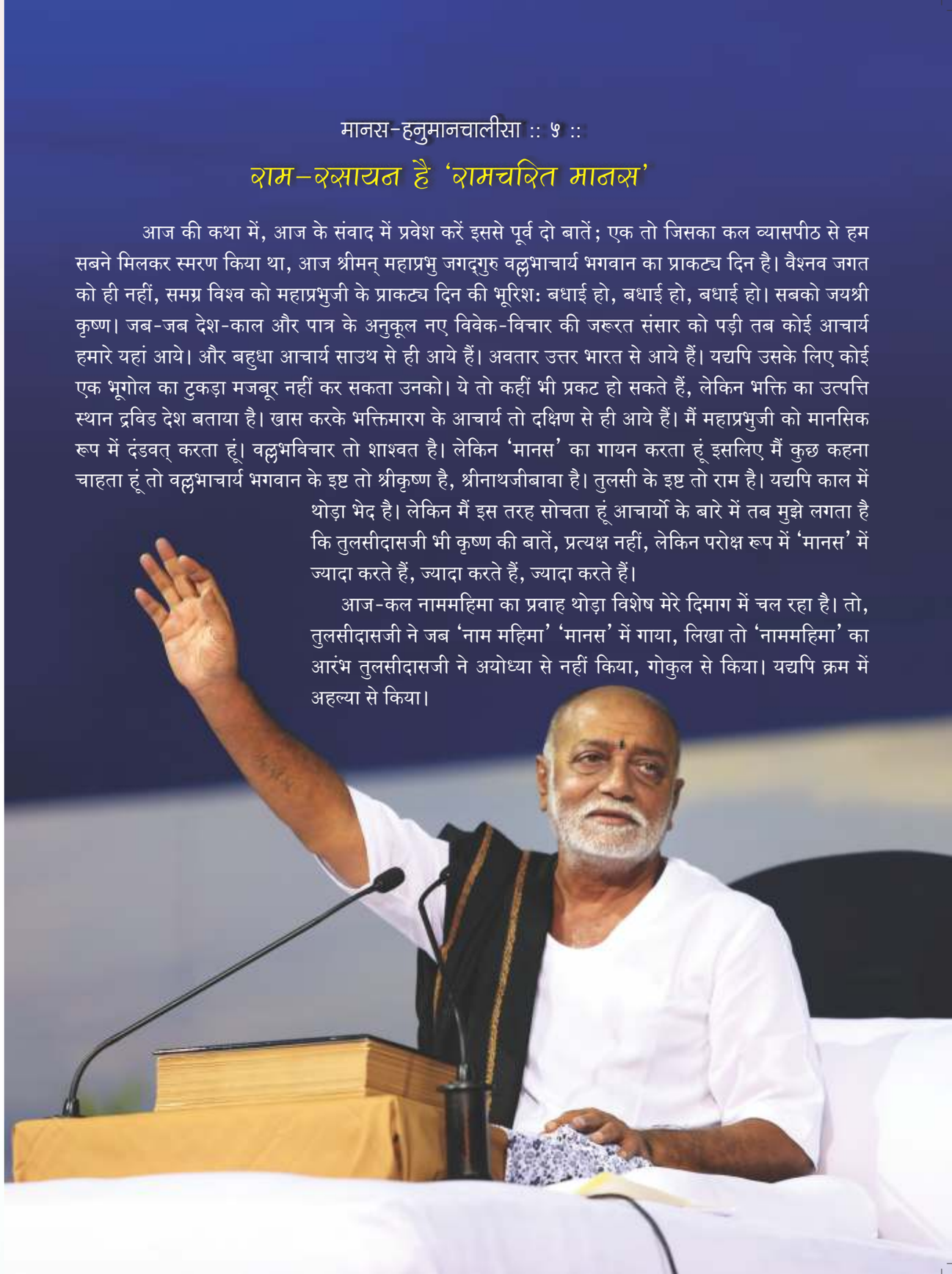

राम एक तापस तिय तारी।
नाम कोटि खल कुमति सुधारी।

अहल्या से नाममहिमा का आरंभ करते हैं तुलसी। और वो क्रम भी तुलसी ने तोड़ दिया है कि यदि अयोध्या से बाहर शुरू करे नाममहिमा तो पहले ताड़का से करना चाहिए। फिर अहल्या का उद्धार। लेकिन ताड़का को भी बाद में याद करते हैं। अहल्या से आरंभ करते हैं। खेर, उसका तात्त्विक-सात्त्विक अर्थ बाद में सोचेंगे। लेकिन अयोध्या को क्यों एक ओर रख दिया? मेरे कहने का मतलब ये है कि कृष्णमत ज्यादा है, प्रत्यक्ष नहीं, परोक्ष। एक पंक्ति आपके सामने रखूं -

जन मन मंजु मधुकर से।
जिह जसोमति हरि हलधर से।।

गोस्वामीजी कहते हैं, भक्त के, दास के, सेवक के, जन के मन कमल है और रामनाम भंवरा है। बिलकुल उल्टा दर्शन है ये! तुलसी कहते हैं, मेरी जीभ यशोदा है और 'रा' और 'म', कृष्ण और बलराम है। जो लोग 'मानस' को इस दृष्टि से नहीं देखते वो संकीर्ण है। वो केवल सिद्धांत में उलझे हैं कि ये द्वैत, ये अद्वैत, ये विशिष्टाद्वैत, ये शुद्धाद्वैत! जिन्होंने प्रेमाद्वैत जाना है वो ये सभी बखेड़े से बाहर निकल जाता है। सिद्धांत सदैव लड़ायेगा, प्लीज़! सिद्धांत यद्यपि जरूरी है व्यवहार में, लेकिन लड़ाता है। गोस्वामीजी रामनाम की महिमा अयोध्या की पवित्र भूमि से क्यों नहीं करते हैं? मथुरा से करते हैं। राम महल में प्रकट हुआ। कनैया जेल में प्रकट हुआ। महिमा नाम की इतनी बड़ी है तो महल से ही शुरू करनी चाहिए थी, लेकिन जेल से शुरू की! सोचिए। ये सब बातें जो आपके सामने मैं रख रहा हूं; मैं आपसे फिर एक बात कहूं, मैं अक्सर कहता हूं कि शास्त्र गुरुमुख होना चाहिए।

आज मुझे पूछा है कि 'बापू, गुरु सदेह में उपस्थित न हो तो शिष्य को उसका कैसा अनुभव होता है?' मेरे भाई-बहन, सच्चे सद्गुरु आश्रित को प्रत्यक्ष होने की जरूरत नहीं रहती है। चैतसिक मुलाकात होती है। आश्रित के मन में प्रगटी जिज्ञासा उसके गुरु के द्वारा निवारण होती है। क्योंकि कोई भी गुरु देह में होगा तब तक तो उसकी सीमा है। हरिकृपा से और आपकी शुभकामना से उसका मैं थोड़ा साक्षी हूं। गुरु की मुलाकात चैतसिक होती है। गुरु निरंतर आपको सिखाता रहता है, निरंतर। ये हनुमान को हम गुरु क्यों कहते हैं? क्योंकि हनुमान अजर-अमर है। देह से हनुमान हमारे सामने नहीं है। लेकिन ये निरंतर है, चिरंतन है, शाश्वत है। माँ वैदेही ने कहा था -

अजर-अमर गुननिधि सुत होउ।

मैं तो आपसे ये निवेदन करूं, इसमें आप अन्यथा मत लेना और आप अन्यथा लो तो भी कोई उसका गिला नहीं है। पीड़ा हंमेशा चार चीज़ की होती है आदमी को। एक पीड़ा होती है अभाव की। पड़ौशी के घर कलर टी.वी. और मेरे घर टी.वी. ही नहीं! ये अभाव की एक पीड़ा शुरू होती है। दूसरी पीड़ा होती है जीव को प्रभाव की। ये मेरे से बड़ा वक्ता हो गया! ये मेरे से बड़ा संगीतज्ञ हो गया! ये मेरे से बड़ा आर्टिस्ट हो गया! दूसरे के प्रभाव को देखकर पीड़ा शुरू हो जाती है। तीसरी पीड़ा का कारण, जो अनुभव का सत्य है वो है कोई आपके बारे में दुर्वाद करे, दुर्भाव रखे तब एक पीड़ा शुरू होती है, यदि सम्यक् चित्त नहीं है तो। और एक मात्र उपाय है कथा, जो बार-बार सुनने से विवेक की जागृति होने पर हमें थोड़ा अपकीर्ति और कीर्ति की ग्लानि और प्रसन्नता से थोड़ा दूर कर सकती है। समकालीन संतों के अनुभव को प्रमाण मानना, जो निकट पड़ते हैं। इसीलिए तो तुलसी ने बहुत प्यारी शर्त तो नहीं, स्नेह व्यक्त किया है -

सद्गुरु बैद बचन बिस्वासा।

हमारी गंगासती कहती हैं-

सद्गुरु वचनुंना थाव अधिकारी पानबाई।

गुरुनां वेण अने गुरुनां नेण आ बे समजे एनो बेड़ो पार छे। चौथी पीड़ा का कारण है अपना स्वभाव। आदमी को सत्संग करने से विवेक प्रकट होता है और ये विवेक के उजाले में फिर अपने स्वभाव का दर्शन करते हैं तब अपने स्वभाव की पीड़ा होती है कि मेरा स्वभाव ऐसा क्यों है? समझदार आदमी को फिर अपने स्वभाव की पीड़ा शुरू हो जाती है। तुलसी कहते हैं, मेरा स्वभाव

बदल दे प्रभु, तू कृपा कर। विशेष प्रकार के कपड़ें पहनने से साधु का परिचय होता है, लेकिन पहचान तो स्वभाव से होती है। शिकायत आदि-आदि चित्त से हटाकर समय मिले किसी साधु का संग करो, तभी पता लगता है कि साधुता क्या है। तुलसी कहते हैं, मुझे अभाव की पीड़ा नहीं है। किसीके प्रभाव से भी मैं जरा भी डिस्टर्ब नहीं हूं। और मेरे बारे में कोई दुर्भाव करे, मुझे कोई चिंता नहीं है। लेकिन हे हरि, तू कृपा करे तो तेरे पास एक कामना करता हूं। क्या?

श्री रघुनाथ-कृपालु-कृपातें संत-सुभाव गहौंगो।
कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।

श्री हनुमानजी महाराज अजर-अमर है इसीलिए शाश्वत है। प्रत्येक साधक जो शरणागत है उसको अपने बुद्धपुरुष का अनुभव चैतसिक हो सकता है। गुरु मरता नहीं है। मरे वो गुरु नहीं है। हमारे परब की जगह का करसनदास बापू; अभी तक उसने सेवादासबापू का भंडारा नहीं किया है। सब साधु जाते हैं; कहे, करसनदास बापू, भंडारा तो करो! तो कहे, मेरा गुरु मरा हो तो भंडोरा करूं न? तुम्हारे मर गये, मेरा तो जीवित है! यकीन करो, बुद्धपुरुष चिरंतन है, शाश्वत है। राम ब्रह्म है फिर भी देह में थे तो देह गया। कृष्ण पूर्णब्रह्म है, लेकिन देह में थे, देह गया। अवतार भी शरीर की सीमा में है तब शरीर छोड़ना पड़ता है। कृष्ण है जगद्गुरु। श्री हनुमानजी महाराज जगद्गुरु। लेकिन हनुमानजी अजर-अमर है, प्रत्यक्ष नहीं है। वैसे गुरु भी अजर-अमर होता है। प्रत्यक्ष नहीं होता है, चैतसिक मुलाकात होती रहती है। चाहिए पूर्ण शरणागति।

मैं निवेदन तो वही कर रहा था, वहीं से आगे बढ़ गया कि शास्त्र गुरुमुख होना चाहिए। तभी उसके रहस्य गुरु की कृपा से खुलेंगे। तुलसीदासजी नाम की महिमा अयोध्या से नहीं आरंभ करते हैं। Why ? क्यों उसको मथुरा याद आया? तुलसी कहते हैं, मेरी जीभ यशोदा है और रामनाम कृष्ण-बलराम है। कहना तो चाहिए मेरी जीभ कौशल्या है। तुलसी को किसी ने पूछा। अब ये पढ़ने जाओगे तो नहीं मिलेगा कि किसी ने पूछा, कब पूछा? अंत:करण की प्रवृत्ति ने पूछा, अंत:करण की प्रवृत्ति ने जवाब दिया। तो पूछा गया गोस्वामीजी को कि आपने अयोध्या के बदले कृष्ण, ये मथुरा प्रदेश और उसको क्यों चुना? तब तुलसी ने जवाब दिया है कि मैं अंदर दिखता हूं ना तो मेरा दिल अयोध्या की तरह नहीं दिखता, मथुरा की तरह दिखता है। अयोध्या में पुण्यश्लोक राजा है और मथुरा में कंस है! अभिमानी राजा है। अयोध्या का ईश्वर प्रकट हुआ; स्वतंत्र है; महल में है। वहां का ईश्वर भी परतंत्र है! और में भी परतंत्र हूं। मुझे कई विकारों ने जकड़ रखा है। मेरे दिल की अवस्था मेरे स्वभाव की अवस्था मथुरा से ज्यादा मिलती-जुलती है इसीलिए मुझे निकट पड़ेगा। कृष्ण मेरी जीभरूपी यशोदा पर रामनाम बनकर आ जाये। गोस्वामीजी 'मानस' में सांकेतिक रूप में कृष्ण को बहुत याद करते हैं, बहुत याद करते हैं।

'विनय' में 'माधव' शब्द कितनी बार आता हैं! एक वैसे साधु तो कैसे मानूं, उसने ऐसी बात की; मुझे कहे कि 'विनयपत्रिका' में माधव का नाम, केशव का नाम, जो आता है ये तुलसी ने लिखे होंगे? ले! अरे यार! अपनी कट्टरता क्यों पेश करते हो? मैं ग्रंथों का नाम न दूं साहब, लेकिन कुछ ग्रंथों में राम का नाम इतनी बार आता है तो सुधारने की कोशिश हो रही है कि राम का नाम नहीं आना चाहिए! कुछ पत्रिओं में कृष्ण की उपासना की बात आई है कि हमारे इष्टदेव कृष्ण है तो बदलने का नेटवर्क बनाया जाता है! ये लोग धर्म की ग्लानि कर रहे हैं! बहुत इतिहास बदलने की लोगों की चेष्टा हो रही है! उसने क्या हरि को जाना जिसको हरि, कृष्ण, केशव, माधव और राम इनमें अंतर दिखाई दे? दया आती है, ओर क्या करे! ये लोग कुछ नहीं पायेंगे! कोरे के कोरे जायेंगे! आज भी मुश्किल पड़ती है तो तुलसीदासजी ने काशी में जब 'मानस' लिखा और 'मानस' में 'कैलाश' के बदले जब 'कैलास' लिखने की बात आई!

परम रम्य गिरिबर कैलासू।

'श' नहीं 'स'। आज भी किसी पंडितों को तकलीफ होती है कि 'श' बोलना चाहिए, 'स' नहीं! ये भाषा दोष है। अब तुलसीदासजी को कितनी मुश्किल हुई होगी उस

समय? फिर मुझे भगवतीकुमार शर्मा दादा याद आते हैं। उम्र होती है न तब कुछ पता लगता है। उम्र भी कुछ सिखा देती है साहब!

हरि, मने अढी अक्षर शिखवाडो!
अेंशीने आरे आव्यो छुं;
मारो अगर जिवाडो!

कबीरसाहब ने तो पहले से कह दिया था, 'ढाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय।' शब्द ने ह्रस्व ने दीर्घ ने अनुस्वार ने ये ने ये ने! मैं सच कहूं? मुझे बोलने में बहुत आनंद आता है! लेकिन कभी-कभी अब मुझे होने लगा है कि मैं इतना क्यों बोलता हूं? मैं सच पूछो, आपके लिए बोलता हूं। ये क्या शब्दआडंबर है? ये प्रासानुप्रास ये शब्दरचना? कहीं एक झूठा प्रभाव तो नहीं डाल देगी? आदमी मुक्त होना चाहिए। भाषा भी एक प्रभाव है। वक्तव्य भी एक प्रभाव है। आदमी को परतंत्र कर देता है। लेकिन एक तो बोलने का आनंद भी आता है, ये भी कहूं हां! तुलसी कहते हैं, 'निज गिरा पावन करन कारण।' तुलसी ने सिखाया हम को इसीलिए बोले जा रहे हैं हम। तुलसी ने कहा है ये बोला जायेगा नहीं शास्त्र लेकिन 'तदपि कहा बिनु रहा न कोई।' फिर भी कोई कहे बिना नहीं रहता है! बोले और कहीं कोई चिनगारी लग जाय और अंधश्रद्धा छूटे, परचा, चमत्कार छूटे और परमतत्त्व की डायरेक्ट यात्रा शुरू हो जाय किसी की तो एक बड़ा काम होगा।

तो, दूसरी प्रसन्नता, कल सायंकाल 'सखी' प्रोग्राम जो प्रस्तुत हुआ; कौशिकी और ये छहो बेटियां ने मिलकर पेश किया। कहीं रजोगुण की छांट नहीं दिखी। परमात्मा और तरक्की दे। खुश रहो, खुश रहो, खुश रहो। तुलसी का तर्पण तो कल हुआ! ज्यादा से ज्यादा तुलसीजी के 'विनय' के पद का कम्पोझिसन होना चाहिए क्योंकि इसमें सत् भरा है। स्वर, सूर, ताल मिल जाय और फिर नर्तन शुरू हो जाये।

दादाजी जहां बैठते थे; जहां में 'मानस' पढ़ा हूं वहां एक हरे रंग का छोटा-सा अलमारी-कबाट था। और उसमें सब संस्कृत ग्रंथ रहते थे। तो, एक दिन मैं साफ़-सूफ़ करने के नाते वो फ़टे-तूटे जर्जरित ग्रंथ को देख रहा था। इनमें संहितायें दो-तीन थी। उसमें से मुझे संगीत के एक छोटे-से पुस्तक के छ-सात पन्ने मिले उसमें 'हनुमंतमत' था। दादा ने उसकी कुछ पंक्तिओं को रेखांकित किया था। वो मैंने पढ़ा कि ये क्या है? आप जानते हैं, एक 'भरतमत' है संगीत में। और 'हनुमंतमत' है। उसमें लिखा है कि सूर को सदैव स्वर के पीछे रहना चाहिए। सूर स्वर को ओवरटेईक न करे। कितना परफेक्ट है संगीतशास्त्र! स्वर की महिमा बहुत है। 'स्वर' आदि हैं, 'सूर' बाद में आया है। कंडक्टर, कंडकटर की जगह हो और ड्राइवर ड्राइवर की जगह हो! ड्राइवर की केबिन होती है। कंडक्टर को तो सबमें घूमना होता है, टिकट, टिकट, टिकट! सबको अपनी जगह याद रखनी चाहिए कि हमारी जगह, हमारी बैठक क्या है? सूर को चाहिए स्वर का अनुगमन करे। और फिर कहते हैं, सूर को अनुगमन ताल का करना चाहिए। ताल ओवर न हो जाय। किसीके स्वर और सूर दबाने का अधिकार ताल को नहीं है। ताल तीसरे स्थान पर है। मैं नहीं कहता हूं, संगीत का शास्त्र कहता है। स्वर ईश्वर है, सूर देवता है। देवता को चाहिए परमात्मा के पीछे चले। देव ईश्वर को ओवरटेईक न करे। तो, स्वर पहले, देवता बाद में। उसके बाद ताल। और मूल ताल मानो कि पखवाज हो, तबला हो, मृदंग हो, जो हो उसके ताल है, उसके पीछे जांज और मंजीरें को जाना चाहिए। सहायक वाद्यों को उसके पीछे जाना चाहिए। तालवाद्य के पीछे बोल और बोलके बाद नर्तन। नर्तन का आखिरी में प्रवेश है। तो, एक पूरी ये यात्रा है। सबकी अपनी-अपनी जगह है। एक-दूसरे को ओवरटेईक करने की जहां स्पर्धा होती है वहां हार्मनी नहीं होती, घोंघाट होता है! संगीत के विद्वान लोग तो कहते हैं कि पूरे अस्तित्व में एक हार्मनी है। लेकिन हम समझ नहीं पाते हैं इसीलिए हमको घोंघाट लगता है। बाकी परमात्मा में सब हार्मनी है; एक नियमितता है; एक छंदबद्धता है।

अब कथा शुरू होती है, 'मानस-हनुमानचालीसा।' धर्म-रसायन, भक्ति-रसायन, नाम-रसायन, काम-रसायन जिसकी संक्षिप्त चर्चा हमने गत दिन की। क्योंकि ये 'राम-रसायन' समझने के लिए इसकी जानकारी मुझे व्यक्तिगतरूप में लगता था कि जरूरी है। अंततोगत्वा तो राम-रसायन मैं सब रसायन समाहित है, लेकिन 'हनुमानचालीसा' की इन पंक्तियों की ओर हम आगे बढ़ें।

राम रसायन तुम्हारे पासा। सदा रहो रघुपति के दासा।।
और देवता चित्त न धरई। हनुमंत सेई सर्व सुख करई।।

गोस्वामीजी कहते हैं, 'राम रसायन तुम्हरे पासा।' श्री हनुमानजी आपके पास राम-रसायन है। और जिसके पास राम-रसायन होता है इसके पास धर्म-रसायन भी अपने आप आता है, भक्ति-रसायन भी अपनेआप आता है, नाम-रसायन भी अपने आप आता है। किस रसायन का कैसे सेवन करना वो विवेक से इस्तमाल करना होता है। और हम निर्णय न कर सके तो इस रसायन देनेवाला वैद और वैद है सद्गुरु। उसको पूछकर इस रसायन का सेवन करे। मैं आपसे बताना चाहता हूं और स्पष्ट है, कोई नई बात नहीं है, राम-रसायन क्या है? मैं तीन बार बोलूंगा और अपनी बात पर कायम रहूंगा। राम-रसायन है 'रामचरित मानस', 'रामचरित मानस', 'रामचरित मानस।' और इसमें धर्म-रसायन है। धर्म की व्याख्या है, सिद्धांतवाले धर्म की नहीं; स्वभाववाले धर्म की व्याख्या है। उसमें काम-रसायन है। काम की चर्चा पुष्पवाटिका में राम ने की। काम की चर्चा भगवान राम 'देवहु तात वसंत सुहावा' करके 'अरण्यकांड' के उत्तरार्ध में ठाकुर स्वयं करते हैं। अरे! वहां तक कहते हैं, मृगी और मृग को नाचते देखकर राम कहते हैं कि मृगी और मृगले मुझे जला रहे हैं कि देखो, हम दोनों साथ-साथ हैं, आप तो बिछड़ गये न! जानकी चुरा ली गई। सीधा काम का रसायन है यहां। भक्ति-रसायन तो है ही। नाम-रसायन तो भरपूर है। नाम की महिमा अद्भुत है। राम-रसायन में ओर चारों रसायन निहित है, समाहित है। ओल इन वन!

तो ये 'रामचरित मानस' रसायन है तो इस रसायन का परिचय क्या? और ये हनुमान के पास कैसे है? 'राम रसायन तुम्हरे पासा।' हनुमान को केवल हनुमान मत समझे; ये शंकर है। 'वानराकार विग्रह पुरारी।' ये ग्यारहवा रुद्र है। ये भी ठीक है, ये बंदर के रूप; माना। लेकिन हनुमान साक्षात् महादेव है, साक्षात् शंकर है, साक्षात् शिव है।

मुझे कभी आपके सामने ये पक्ष भी रखना है कि हनुमानजी को मेरी व्यासपीठ कह रही है कि ये साक्षात् शिव है तो उसके सिर पर गंगा कौन-सी है? उसके भाल में चंद्र कौन है? उसके वाम भाग में कौन शक्ति विराजित है? मैं आपसे बातें करूंगा। और हनुमान शिव है इसीलिए उसके पास 'रामचरित मानस' है। कैसे?

रची महेस निज मानस राखा।
पाई सुखमय सिवा मन भाखा।।
रामचरित मानस एहि नामा।
सुनत श्रवन पाईए विश्रामा।।

'रामचरित मानस' रसायन है, आपके पास है, आप शिव है। और रसायन द्रव्य होता है। रस होता है। और रस होठों से पीया जाता है, मुख से पीया जाता है। लेकिन राम रसायन, 'रामचरित मानस' ऐसा है कि -

सुनत श्रवन पाईए विश्रामा।

ये रसायन होठों से नहीं, कानों से पीया जाता है। तो, राम-रसायन का पहला लक्षण है ये कान से पीया जाता है। अथवा तो गायक को बोलने से इस रसायन का सेवन होता है। 'रामचरित मानस' स्वयं रसायन है और ये राम का चरित्र स्वयं रसायन है। 'रामचरित मानस' में चार रसायन का विभाग है। इसमें रूप-रसायन है यानी ठाकोरजी के रूप का वर्णन है। उसमें नाम-रसायन तो मैंने पांच रसायनों में ओलरेडी एक स्थान पर रखा है। इसमें लीला-रसायन है। और उसमें ठाकुरजी के धाम का रसायन है। धाम धन नहीं है। धाम जमीन का टुकड़ा नहीं है, ये रसायन प्राप्त करने की भूमिका है। अयोध्या क्या है? कोई नक्शा है? नहीं, ये भूमि नहीं, ये भूमिका है। तो, परमात्मा के सगुण विग्रह के साथ जो जुड़े हैं नाम, रूप, लीला, धाम।

तो, 'राम रसायन' का पहला लक्षण है, कानों से पीना पड़ता है और उसका परिणाम है, फलश्रुति है,

विश्राम। और ये कोई सिद्ध करने की बात नहीं। तो, हनुमानजी के पास राम-रसायन है वो 'रामचरित मानस' है। और प्रत्यक्ष रूप में हनुमानजी ने इस 'रामचरित मानस' की कथा का, इस राम-रसायन का पान कानों से चार श्रोताओं को कराया है 'मानस' में प्रत्यक्ष रूप में। एक श्रोता है, हनुमानजी की कथा के माँ जानकी। अशोकवृक्ष की घटा में छिपे ये वक्ता महादेव जानकीजी कथा सुना रहे हैं अशोकवाटिका में। माँ ग्लानि से भरी हुई है। मरने तक का विचार सोच रही है, उसी समय श्री हनुमानजी ने जिसके पास 'रामचरित मानस' रूपी राम-रसायन था, उसने वहां रसायन का प्रयोग किया और उसका फल है, 'सूनतहिं ही सीता कर दु:ख भागा।' राम-रसायन रामकथा के रूप में पीए इसके दु:ख भागते हैं, सीधी बात है। तो, जानकीजी को इतनी अच्छी लगी कथाकार की कथा तब जानकीजी से रहा नहीं गया कि इतनी मधुर कथा सुना रहा है, तू कौन है? मुझे दर्शन तो दे! मेरे सामने तो आ! मुझे केवल संकेत करना है चार श्रोताओं का। ये प्रत्यक्ष श्रोताओं की बात कहता हूं, प्लीज़। बाकी हवा के रूप में हनुमान कथा ही गाता रहता है चारों ओर।

दूसरे श्रोता है विभीषणजी। यद्यपि क्रम में विभीषण पहले हैं। बाद में जानकी के पास आये हनुमानजी। विभीषण और हनुमानजी की मुलाकात होती है। विभीषण को श्रोता बना दिया। सुबह-सुबह कथा चल रही है। कथा सुनने लगे। और विभीषण ने भी कहा बीच में, इतनी सुंदर कथा सुनाते हो तो आपका नाम तो बताओ।

तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम।

वक्ता कथा को आगे रखे, खुद के नाम को पीछे रखे। मैं कथा के आयोजकों को खास कहता हूं कि उपर बड़े अक्षरों में 'रामकथा' लिखना फिर नीचे छोटे अक्षरों में 'मोरारिबापू' लिखना। मोरारिबापू उपर आ जाय और रामकथा नीचे आ जाय तो मोरारिबापू का भी अपमान है और रामकथा का भी बहुत बड़ा अपमान है! अग्रीम तो रामकथा होनी चाहिए न? मोरारिबापू तो ये (रामकथा) है तो है!

तो हनुमानजी के एक श्रोता है माँ जानकी, जो कानों से राम-रसायन पीती है। दूसरे है विभीषणजी। और तीसरे और चौथे ये दो श्रोता साथ में है। जानकीजी को वहां जाकर कथा सुनाई। विभीषण को घर में जाकर सुनाई। कथाकार कितने दयालु है! भरत, शत्रुघ्न दोनों को सुनाई कथा अयोध्या के उपवन में। लक्ष्मणजी को निकाल दिये! ध्यान देना, बहुत-बहुत रहस्य है! कथा अद्‌भुत है! श्री हनुमानजी महाराज को लेकर भरत और शत्रुघ्न रामराज्य के बाद अयोध्या के उपवन में जाते हैं। लक्ष्मणजी ने कहा, आप कहां जा रहे हो? भरतलालजी ने कहा कि आपने तो स्वयं राम का संग किया है। उसको थोड़ा रामकथा का संग तो करने दो। सद्‌बुद्धि में स्नान करके मेरा हनुमान कथा कह रहा है। कथा उससे सुनो जिसके पास राम-रसायन हो।

कुछ बातें कल करेंगे। आज यहां ही रुकते हैं। लेकिन रामजनम की कथा सुना दूं। याज्ञवल्क्य महाराज ने भरद्वाजजी को कथा सुनाई। पूरा शिवचरित्र गायन किया है। शिवजी ब्याह करके पधारे हैं कैलास पर। पार्वती के प्रश्न के उत्तर में भगवान महादेव पहले निर्गुण परमात्मा की चर्चा करते हैं। राम का अवतार क्यों हुआ? पांच कारण बताये हैं 'मानस' में। पहला कारण जय-विजय सनतकुमार से श्रापित हुए ये। दूसरा कारण सतीवृंदा ने विष्णु को शाप दिया। तीसरा कारण नारद ने श्रीहरि को शाप दिया। चौथा कारण मनु-शतरूपा को आशीर्वाद प्राप्त हुआ कि आपके घर पुत्र के रूपमें आउंगा। पांचवां और अंतिम कारण राजा प्रतापभानु। प्रतापभानु दूसरे जनम में रावण हुआ। अरिमर्दन कुंभकर्ण हुआ। सुरुचि विभीषण हुआ। रावण, कुंभकर्ण और विभीषण ने बहुत तपस्या की। और वरदान के बल से रावण का जुलम बढ़ने लगा! धरती अकुला उठी! गाय का रूप लेके धरती ऋषि-मुनिओं के पास, वहीं से देवताओं के पास, वहीं से पितामह के पास गये। ब्रह्मा की अगवानी में देवकुल, मुनिकुल, ऋषिकुल, पूरी पृथ्वी सबने मिलकर पूरे अस्तित्व ने प्रभु को पुकारा।

एक बार धर्मपुरुष महारथी दशरथजी को ग्लानि हुई, मुझे पुत्र नहीं हैं। रघुवंश मेरे से समाप्त हो जायेगा क्या? दशरथजी गुरुद्वार जाते हैं। सुख-दु:ख के समिध लिए हुए हैं। पुत्रकामेष्टि यज्ञ पूरा हुआ। भक्ति समेत आहुतियां दी। आखिर में यज्ञपुरुष अग्नि के रूप में प्रसाद का चरु लेकर प्रकट होते हैं। वशिष्ठजी को देते हैं। महाराज दशरथजी ने यज्ञप्रसाद बांटा। तीनों रानियों ने प्रसाद पाया। मेरे गोस्वामीजी दो-टूक कहते हैं कि हरि गर्भ में आये हैं। वो उर में रह सकता है, उदर में भी रह सकता है। तुलसी राम को जनम भी दिलवाते हैं, प्रकट भी करते हैं। पसंद किया युग के रूप में त्रेता। क्योंकि त्रेता यज्ञ का युग माना गया है। सत्‌युग ध्यान का। ईश्वर को यज्ञ की प्रसादी के रूप में प्रकट होना था इसीलिए यज्ञ-युग पसंद किया त्रेता। दूसरा कारण, भगवान जगत को कहते है कि यज्ञ में आहुतियां दी जाती है, लिया नहीं जाता है। जिस घर में तीन का समुच्चय रूप था - ज्ञान, कर्म और भक्ति। कौशल्या ज्ञान, सुमित्रा उपासना, कैकेयी कर्म। और इसी त्रिवेणी में ठाकुर को प्रकट होना है। इसीलिए त्रेतायुग पसंद किया है।

राम आये हैं मधुमास में, वसंतऋतु में। प्रभु ने अमृतमास पसंद किया है। पक्ष, शुक्लपक्ष, धवलपक्ष पसंद किया है। सत्य का पक्ष उज्वल होता है। तिथि निश्चित की नवमी। नव का अंक पूर्णांक है। नौमि तिथि, नौमि का एक अर्थ है झुकना। जिसके जीवन में नम्रता अतिथि बनकर आ जाती है, जिसके जीवन में सरलता अतिथि बनकर आती है, वहां प्रभु प्रकट होते हैं। 'नव' का अर्थ होता है 'नितनूतनता।' परमात्मा उसी के हृदय में प्रकट होता है जो रोज नया है, ताजा-तरोजा है। और भगवान ने वार पसंद किया है भौम वार। भौम का अर्थ है भूमि, पृथ्वी। मंगलवार पसंद किया है क्योंकि प्रभु को धरती पर अवतार लेना है, भूमि पर आना है। अथवा तो जिसका नाम मंगल, जिसकी कथा मंगल, रूप मंगल, काम मंगल है। ठाकोरजी का धाम मंगल है इसीलिए परमात्मा मंगलवार पसंद करते हैं। फिर मध्याह्न पसंद करते हैं। अभिजित नक्षत्र पसंद किया। अभिजित सदैव शुभ होता है। विजयी नक्षत्र माना जाता है। सूर्य मध्याह्न में था। न बहुत ठंड है, न बहुत गर्मी है। नदीओं में अमृत बहने लगा। चारों ओर मंद शीतल वायु बहने लगा। और पूरे जगत में जिसका वास है, पूरा जगत जिसमें निवास करता है ऐसा ब्रह्म, ऐसा परमेश्वर, ऐसा ईश्वर, ऐसा परमतत्त्व परमात्मा, ऐसा भगवान, जो नाम देना चाहो वो परमतत्त्व कौशल्या के भवन में प्रकट हुए। फिर प्रभु माँ के कहने पर मनुष्यरूप होते हैं। बालक बनकर माँ के अंक में आ गये और भगवान रोने लगे। पुत्रजनम की बात समझ में आई और महाराज दशरथ के कानों तक बात पहुंची, महाराज बधाई हो! और पुत्रजन्म की बात सुनते ही महाराज दशरथजी ब्रह्मानंद में डूब गए! सोचने लगे कि जिसका नाम मात्र सुनाने से शुभ होता है वो मेरे घर आ गया? कौन मानेगा? ये भ्रम है कि ब्रह्म है? निर्णय तो गुरु करेगा। वशिष्ठ को बुलाओ। ब्रह्मानंद परवर्तित हो गया परमानंद में! और अयोध्या में रामजन्म की बधाई का आरंभ हुआ। आप सभी को और गोवा की भूमि से पूरी दुनिया को फिर एक बार रामजन्म की बधाई हो।

राम-रसायन मैं सब रसायन समाहित है, जिसके पास राम-रसायन होता है इसके पास धर्म-रसायन भी अपने आप आता है, भक्ति-रसायन भी अपनेआप आता है, नाम-रसायन भी अपने आप आता है। किस रसायन का कैसे सेवन करना वो विवेक से इस्तेमाल करना होता है। राम-रसायन क्या है? मैं तीन बार बोलूंगा और अपनी बात पर कायम रहूंगा। राम-रसायन है 'रामचरित मानस', 'रामचरित मानस', 'रामचरित मानस।' और इसमें धर्म-रसायन है। सिद्धांतवाले धर्म की नहीं; स्वभाववाले धर्म की व्याख्या है। उसमें काम-रसायन है। काम की चर्चा पुष्पवाटिका में राम ने की। भक्ति-रसायन तो है ही। नाम-रसायन तो भरपूर है। राम-रसायन में ओर चारों रसायन निहित है, समाहित है।

कथा-दर्शन

- 'हनुमानचालीसा' सिद्ध भी है और शुद्ध भी है।
- 'हनुमानचालीसा' तत्त्वत: रामकथा का भाष्य है।
- 'हनुमानचालीसा' का अनुसंधान आदमी को युगबंधन से मुक्त करता है।
- पूरा 'रामचरित मानस' राम-रसायन है।
- राम-रसायन में सब रसायन समाहित है।
- राम-रसायन शुद्ध का उद्धारक है, अशुद्ध का विनाशक है।
- कलियुग नाम-रसायन की मौसम है।
- नाम-रसायन आदमी को विश्वकेन्द्री बना देता है; स्वकेन्द्र से विश्वकेन्द्र की यात्रा कराता है।
- गुरु अस्तित्व में एक विशिष्ट व्यक्तित्व होता है।
- गुरु से ज्ञान मिलता है। ज्ञान से मोह भंग होता है।
- या तो सबकुछ सद्गुरु पर छोड़ दो, या तो सद्गुरु को ही छोड़ दो।
- गुरु दबा हुआ साधुपना खोल देता है और साधक का अंदर का दीप जल जाता है।
- गुरु की मुलाकात चैतसिक होती है।
- प्रलोभन दे वो साधु नहीं। हमारे विश्वास को द्दढ़ करे वो साधु।
- ऋषि-मुनि शाप देते हैं, साधु कभी शाप नहीं देते।
- अध्यात्म में-प्रेममारग में सोचने की जगह नहीं है।
- सबको अपने धर्म में निष्ठा रहनी चाहिए।
- माला का मेरु सद्गुरु होता है, उसका कभी अतिक्रमण न करो।
- सिद्धांतवालों ने भरमाया है, स्वभाववालों ने मुक्त कर दिया है।
- सुख-दु:ख में सम रहता है उसको कभी पीड़ा नहीं होती।
- लोग सपरिवार कथा सुनते हैं ये इक्कीसवीं सदी का सगुन है।

मानस-हनुमानचालीसा :: ६ ::

नाम सर्वश्रेष्ठ राम-रसायन है

'मानस-हनुमानचालीसा' की जो पंक्ति का आश्रय करके कुछ जीवनोपयोगी चर्चा कर रहे हैं; इससे पूर्व कल सायंकाल जो ये कार्यक्रम प्रस्तुत हुआ और बहुत आनंद की वर्षा की।

राम रसायन तुम्हारे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।

और आखिर रसायन की चर्चा करते-करते हम उस मुकाम पर पहुंचे हैं कि हनुमानजी के पास जो राम-रसायन है वो तत्त्वत: क्या है? और आखिर में जो मेरी समझ है, जो गुरुकृपा है उसके आधार पर वहां पहुंचा आपके साथ-साथ कि हनुमानजी के पास जो राम-रसायन है वो 'रामचरित मानस' है। भगवान की कथा के बारे में कुछ बिलग-बिलग शब्द का प्रयोग किया गया है। तो, एक तो ये चरित्र है, जैसे बार-बार हम बातें करते रहे हैं कि 'मानस' चरित्रों का 'पंचामृत' है। इसमें शिवचरित्र है और उमाचरित्र मिला हुआ है। 'रामचरित्र' में सीताचरित्र मिला हुआ है क्योंकि 'गिरा अरथ जल बीचि सम...' इस न्याय से। तीसरा भरतचरित्र है। 'भरतचरित्र करि नेम...' आदि-आदि प्रमाण है। चौथा हनुमंतचरित्र और पांचवां भुशुंडिचरित्र है। तो ये पंचामृत है। दूसरा एक शब्द भी 'मानस'कार कहते हैं 'रामकथा' है, ये। ये 'रामचरित' भी है और 'रामकथा' भी है। 'रामकथा कलि पंनग भरनी...' आदि-आदि आप पढ़ते हैं। और ये 'रामलीला' भी है। 'गिरिजा सुनहु राम कै लीला।' कहीं-कहीं 'रामगुन ग्राम' भी लिखा है।

दहन रामगुनग्राम जिमि इंधन अनाम प्रसंग।

कहीं 'गुनगाथा' भी कहा है। तो, परमात्मा के चरित्र के लिए इतने सब शब्द बिलग-बिलग रूप से उसकी योजना क्यों की गई? एक अर्थ में तो चलो मान ले कि ये सब पर्याय है। लेकिन दूसरे अर्थ में कोई संत जब शब्द का चयन करता है तो उसके पीछे अर्थ दौड़ता है। हम उसका अर्थ न समझे तो बात और है लेकिन बहुत से अर्थ पीछे-पीछे गति करते हैं। ये शास्त्र का भी नियम है और साहित्य का भी नियम है। तो जब यहां बिगल-बिलग शब्द बतायें तब कुछ विशेष रूप में उसकी बात करने को जी करता है।

'रामकथा'; कथा उसको कहते हैं कि जो कही जाय सो कथा। 'जो बोले सो हरि कथा।' यद्यपि नवलकथा के रूप में लिखी भी जाती है। नवलकथा जो लिखते हैं साहित्य के क्षेत्र में उसको भी हम कथाकार ही कहते हैं। तो कथा का मूल अर्थ है कि जो कही जाय, बोली जाय अथवा तो जैसे ये हमारी विधा है कि हम गाते रहते हैं, गाई जाय। और ये हमारी क्या? ये तो बहुत पुरानी पद्धति है गाने की।

गावत संतत संभु भवानी।
अरु घटसंभव मुनि बिग्यानी।।

भक्त गाता है, प्रेमी गाता है, ये समझ में आता है। लेकिन ज्ञानी गाये ये जरा मुश्किल मामला है! लेकिन यहां तो ज्ञानी को भी ओवरटेईक कर दिया -

अरु घट संभव मुनि बिग्यानी।

जैसे आईन्स्टाईन, न्यूटन, जगदीशचंद्र बोझ, अमर्त्यसेन, गाने लगे! और व्यास-वाल्मीकि आदि जो कविवर है, कविश्रेष्ठ है, जैसे इस बीसवीं सदी में हम कविवर टागोर कहते हैं। कवि श्रेष्ठ है ये। टागोर ने तो गाया भी। पूरा रवीन्द्रसंगीत, 'शांतिनिकेतन' की देन है। व्यास कविवर्य है, लेकिन गाते हैं।

नमोस्तुते व्यास विशालबुद्धे।

वाल्मीकि तो आदि कवि है। भगवान शंकर अनादि कवि है। सब गाते हैं। व्यास गाते भी है, व्यास कहते भी है, व्यास बोलते भी है, व्यास संवाद भी करते है, व्यास लिखते भी है, व्यास 'महाभारत' की कथा में स्वयं सरीक भी है। कथा का एक पात्र भी है। व्यास की तो बड़ी भूमिका है। पात्र के रूप में गाये बिना तो नहीं रह सकता। श्लोक गाते हैं व्यास।

आज मेरे पास एक प्रश्न है कि 'बापू, कल आपने कहा, 'रामचरित मानस' राम-रसायन है उसमें लीला भी रसायन है, रूप भी रसायन है, धाम भी रसायन है और नाम भी रसायन है?' यस। बड़ा प्यारा प्रश्न है। तो मुझे पूछने की जरूरत नहीं। आप ऐसे ही समझ लो। लीला का मेरे मन में बहुत महत्त्व है। धाम का भी है। मैं समय है तो अयोध्या कभी चक्कर लगा लेता हूं; काशी चला जाता हूं; वृंदावन चला जाता हूं; जगन्नाथपुरी जाता हूं। धाम की किसके मन में महत्ता नहीं होती है? मैं गायक हूं, तो लीला तो गाता रहता हूं, देखता रहता हूं। ये श्रेष्ठ-निम्न की बात नहीं है, लेकिन मुझे चारों रसायन में से कोई पूछे तो मैं तो नाम-रसायन ही पसंद करूंगा। जैसे कोई मुझे परोसे तो मैं पहला भजिया उठा लेता हूं! और इनमें भी मिर्ची का पहला उठाता हूं! मेरे सामने ये चार रसायन कोई रख दे तो तलगाजरडा सबसे पहले नाम-रसायन पसंद करेगा। उसके सिवा हमारे पास कोई उपाय नहीं है साहब! नाम-रसायन, खूब पीओ; खूब पिलाओ।

आज ये भी प्रश्न मेरे पास है कि बापू, आपने कल कहा, 'उपासु जप', 'मानसिक जप' और 'वाचिक जप।' जीभ से बोला जाय, होठ हिले, हमें भी सुनाई दे, जीभ से उच्चारित हो, 'राम, राम, राम, क्रिष्न, क्रिष्न'; 'मानसिक जप' है जो मानसिक रूप में जपा जाय। 'उपासु' उसको कहते हैं कि दूसरों को न सुनाई दे, होठ हिले भी नहीं, लेकिन आपको पता रहे कि जप चल रहा है। ये बिलग-बिलग व्याख्यायें हैं शास्त्रों की।

तुलसी को आप पूछो कि आपको उपासु जप पसंद है कि मानसिक जप पसंद है? तुलसी दो-टूक जवाब देंगे कि उपासु और मानसिक को प्रणाम करूं, मुझे तो जीभवाला जप चाहिए। मेरी जीभ भले हिले। दुनिया जो कहे कि तोते की तरह रटन कर रहा है! ये उनका करम है। मैं भी इसी मारग का मार्गी हूं। तो, मेरा स्पष्ट अभिप्राय रहेगा कि 'मानसिक जप' 'उपासु जप' जो-जो जप की बातें आती है, लेकिन हम जिस मारग के मार्गी है उसमें तो जीभवाला जप ही काम आयेगा। आज प्रसाद में चूरमा के लड्डु है। अब 'लड्डु' शब्द मैं बोला तो उसका ज्ञान तो हमारी पास आ ही गया कि ऐसा होता है, घी, गुड़ अथवा तो चीनी, गेहू का आटा वो लड्डू। और मानसिक रूप में हम में लड्डु का चिंतन शुरू हो जाता है। लेकिन लड्डु का स्वाद तो जीभ पर जाने से ही होता है। राम का आप मानसिक जप करो, उपासु जप करो, अच्छी बात है। लेकिन स्वाद तो यार जीभ पर राम आयेगा तभी होगा।

युवान भाई-बहन, नाम सर्वश्रेष्ठ राम-रसायन है। जीभ से रटो। स्वाद आयेगा। तो मैं आप-से ये निवेदन करना चाहता हूं कि पांडवों का प्लस पोईंट था कृष्णसंग। हमारे

पास कृष्ण नहीं है, हमारे पास आज रामरूप में मौजूद नहीं है। कथानकों में है। मंचन पर है, लीलाओं के रूप में, गायन के रूप में है। इसीलिए गोस्वामीजी कहते हैं-

इस भजन सारथि सुजाना।
बिरति चर्म संतोष कृपाना।।

गायन आदमी को टेन्शन से मुक्त करता है। आदमी गाये। तो मेरे निवेदन ये हैं कि प्रेमी तो गाये बिना रह नहीं सकता। मीरां प्रेमी है इसीलिए खूब गाया। मीरां तो एक कदम ओर आगे बढ़ी, नाची भी। चैतन्य ने खूब गाया क्योंकि प्रेमी है, नाचे भी। नारद ने खूब गाया, नाचे भी। हनुमानजी ने खूब गाया, नाचे भी। लेकिन ज्ञानी लोग गाये। आईन्स्टाईन गाये, एडिसन गाये, न्यूटन गाये।

तो, कथा वो है मेरे भाई-बहन, जो कही जाय, गायी भी जाय। और गाने की परंपरा कैलासी परंपरा है। 'गावत संतत भवानी।' वहीं से ही शुरू हुआ है। 'लीला'; लीला का एक अर्थ होता है नाटक। वहां श्रोता नहीं होता, वहां दर्शक होते हैं। हमें देखना है। यदि डायलोग सुने लेकिन प्रधानता देखने की है। लीला देखी जाय। इसीलिए भगवान की लीला देखने से बेहतर है कथा सुनना। क्योंकि लीला देखने जायेंगे तो संदेह हो जायेगा कि भगवान क्यों बंधे? राम क्यों रोये? और सुनना है भगवान की कथा तो संदेह से मुक्ति हो जायेगी। मोह नष्ट हो जायेगा।

तो लीला, जिसका दर्शन होता है। कथा वो है जिसका कथन होता है। चरित्र वो है जिसका आचरण होता है। जैसे कि राम के समान जीने की लोगों को इच्छा होती है। कितना हम जी पाये! तो बिलग-बिलग शब्द की श्रेणियां 'मानस' में आई उसमें नाम जो है, उत्तमोत्तम रसायन है। वो सुमिरन किया जाय, जप किया जाय। जीभ भले हिले, हिलने दो। कम से कम रामनाम में हिलेगी तो हराम में तो नहीं हिलेगी! ये तो फायदा हो जायेगा। हमें स्वाद चाहिए। तो, मेरे भाई-बहन, कथा लीला-चरित्र आदि-आदि जो बिलग-बिलग बातें 'मानसकार' ने कही है, वो सब हनुमानजी के पास है।

राम रसायन तुम्हारे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।

पूरा 'रामचरित मानस' राम-रसायन है, जो हनुमानजी के पास है। लेकिन इनमें भी मुझे पहला रसायन उठाना है वो नाम है। आप, आप जाने। मैं कल भी इस रसायन के बारे में आपके सामने बोल रहा था। तो तुलसीदासजी ने कौशल्या से शुरू नहीं किया, यशोदा से शुरू किया। तुलसी चाहते हैं कि यशोदा सोई थी और नंदबाबा कृष्ण को छोड़कर चले गये। वो तो सोई थी! तुलसी वहां से अपना जप शुरूआत करते हैं कि मेरी दशा ये हो कि मेरी जीभ सो गई हो तो हरि का नाम उसको जगाये। और रसायन पीने के लिए होठ भी चाहिए और जीभ भी चाहिए। जिह्वा को रसवर्धिनी कहा है। जीभ नाम के पीछे घूमे। लेकिन यशोदावाला पक्ष, जहां नाम स्वयं आ जाये और नाम रोये। भगत नहीं, नाम रोये। कृष्ण रोया। और जब कृष्ण रोया तब यशोदा जागी, ओह! ये क्या है? तब मालामाल हो गई! हम सोये हैं! हमारी जीभ हरि नहीं बोलेगी लेकिन ठाकुर, तू आ जा और तू रो। हम नहीं रोयेंगे! हम तो मूढ सोये हैं! ऐसा पक्ष तुलसीदासजी खोलते हैं, जो हमें बहुत करीब पड़ता है।

छू लेने दो नाजूक होठों को,
कुछ और नहीं है जाम है ये ...

फिल्म में फिल्माया गया वो जो जाम हो, फिल्म को मुबारक! लेकिन जाम है हरिनाम। और ऐसा जाम है कि 'नाम खुमारी नानका घडी रहे दिन रैन।' चौबीस घंटों जिस जाम का नशा न उतरे!

मुझे कल पत्रकार परिषद में पूछा गया कि 'बापू, आज-कल बहेनों पर बलात्कार होते हैं, अपमान होते हैं, ये होता है। आपकी क्या राय है?' मैंने कहा, कतई नहीं होने चाहिए। भारत में भी नहीं और दुनिया में भी नहीं होने चाहिए। 'उपाय?' उपाय मैंने कहा एक ही। उसने तो बहुत तर्क किये कि कुछ धर्मात्मा लोग ऐसा कहते हैं कि ये आज का जो पहरवेश है वो भी जिम्मेवार है। मैंने कहा, मैं इसमें नहीं जाउंगा। मेरा ये क्षेत्र नहीं है। वो सब अपनी-अपनी राय है। मैं तो इतना ही कहूं कि हमारी आंख शिकारी मिट जाय और पूजारी बन जाय। बिलकुल सरल रास्ता है। कैसे भी वस्त्र परिधान कोई करे, करे! लेकिन तुम्हारी आंख उसकी आरती उतारे! श्रीनाथजी का दर्शन शृंगार में भी होता है और मंगला में

ठाकुरजी केवल स्नान करके केवल एक वस्त्र लपेटे वो भी सुंदर लगता है। पूजारी की आंख चाहिए। शिकारीवाली आंख होगी तो हर मर्यादावाले नकाब में भी वो शिकार कर लेगी! आंख पूजारी हो तो इस समस्या का हल हो सकता है। मैं तो ऐसा मानता हूं। सबमें कोई न कोई कमजोरियां होती है। फिर भी मातृशरीर के साथ अत्याचार, अनाचार नहीं होना चाहिए।

एक प्रश्न तो बड़ा विचित्र कल आया था कि 'आप 'रामचरित मानस', 'रामायण' की ही कथा क्यों कहते हैं? 'रामायण' ही क्यों पढ़ते हैं?' मैं समझ गया कि उसके पीछे क्या है? इस मुल्क की, इस प्रदेश की विचारधारा भी काम कर रही थी उसके पीछे कि ये ही क्यों? उसका मतलब ये था! तो, मेरे मन में बहुत घूमता था लेकिन मैंने वो जवाब नहीं दिया। मेरे पास समय भी नहीं था और तर्क-वितर्क में क्या लेना-देना? तो, मैंने कहा, 'रामचरित मानस' समुद्र है। इसमें सभी नदियां समाती है। एक ऐसा शास्त्र मैंने उठाया है कि जिसमें सब है। इसको पढ़ो तो सब पढ़ लो।

हिंदु आन को बेद सम यवनही प्रगट कुर्आन।

लेकिन मैं पूछ सकता हूं कि इसाई धर्मगुरु 'बाईबल' ही क्यों पढ़ते हैं? मुझे जवाब दो! आदरणीय इस्लाम धर्मगुरु केवल 'कुर्आन' को ही पढ़ने क्यों राजी होते हैं? और मोरारिबापू 'रामायण' पढ़े तो इसमें आपको आपत्ति नहीं होनी चाहिए! और आपने मुझे जेरुसलाम में सुना है? आपने मुझे रोम में सुना है? मैं भरपूर जिसस पर बोला हूं। 'मानस-ईसु' पर बोला हूं। 'मानस-भगवान' पर बोला हूं। यहां कोई परहेज नहीं है। आप कभी अपने धमग्रंथ के आधार पर 'राम' का तो जिक्र करो! दंडवत् करूं! और किसीको आप प्रश्न करो मेरे भाई-बहन, तो इसके बारे में पहले थोड़ा जान लो, फिर प्रश्न करो। ये नियम है। 'आप की अदालत' में रजत शर्माजी ने मुझे निमंत्रित किया। उसने मेरा स्टडी कर लिया छ महिने में कि बापू कथा में क्या बोलते हैं? ये पूरा स्टडी करके इस आदमी ने इन्टर्व्यू लिया। मैंने दो बस्तु की मना की थी रजतभैया को। उसमें पहले बात ये कि उसने कहा, आप प्रश्न पहले पढ़ लो। मैंने कहा, मैं नहीं पढूंगा। आप वहां पूछियेगा, साहब। और दूसरा, बोले, बापू थोड़ा मेकअप करना पड़ेगा, क्योंकि टी.वी. में ठीक दिखे। मैंने कहा, ये नहीं होगा यार! ये मेरे स्वभाव के अनुकूल नहीं है। बस जैसा हूं वैसा में आउंगा। उसने स्टडी कर लिया साहब! मैं क्या बोलता हूं, किस-किस विषय पर बोलता हूं उसको पहले सुनो तो सही। फिर मुझे पूछो! केवल पूर्वग्रह के कारण हिन्दुधर्म की आलोचना? सनातन धर्म की आलोचना? कथा की आलोचना? मेरा कोई ठिकाना नहीं! मैं 'मानस-मोहम्मद' भी करूं! मेरा गुरु जब मुझे छुएगा तब, इज़ाज़त देगा तब! क्योंकि इन जो परमतत्त्व है उसमें तो कोई तकरार नहीं है। मैं तो 'रामायण' के आधार पर कितनी बातें करता हूं! सर्वधर्म सन्मान है मेरे पास। 'सर्वधर्म सन्मान', 'सर्वधर्म समान' नहीं। समान हो ही नहीं सकते कोई। सबके सिद्धांत बिलग है, सबके विधान बिगल है। पूरा दिल का सन्मान है।

'विनय' में तुलसी कहते हैं, मेरे लिए रामनाम ब्रह्म नहीं है, कालि नहीं है, भाई नहीं है, मेरे लिए रामनाम माई-बाप है। और माँ-बाप के सामने व्याकरण सहित बोलने की जरूरत नहीं। 'उलटानाम जपत जग जाना।' बालक को गोद में लिए बाप ये नहीं सोचता कि बच्चा व्याकरण सहित बोले! वो तो 'मरा' 'मरा' बोले तो भी पास हो जाता है। बच्चा रोटी मांगना है तो बेचारा 'रोटी' न बोल सके। बोले, मुझे 'लोटी' दो, तो माँ उसको लोटी देती है? माँ समझ जाती है कि बेचारा रोटी बोल रहा है, 'मरा, मरा' बोले तो भी राघव अमृत दे देगा क्योंकि माँ है, वो जानती है।

'ऋचौनामारिम...' 'ऋग्वेद' कहता है, मेरी ऋचायें हरिनाम है। 'यमुर्नास्मि...' 'यजुर्वेद' कहता है, में नाम हूं। 'सामानीनामास्मि...', 'सामवेद' कहता है, नाम हूं। साहब, वेद स्वयं कहता है, मैं हरिनाम हूं।

बिधि हरिहर मय बेद प्राण सो।

हरिनाम वेद ही क्या, वेद का प्राण है। वेद सांस तभी ले सकते जब उसमें हरिनाम हो। किसी भी संदर्भ से लो। लेकिन मुझे जब प्रमाण मिलने लगते हैं तो मैं फूला नहीं समाता कि गुरु ने ठीक पकड़वा दिया है, साहब! तुलसी ने 'विनय' में कहा कि मेरे गुरु ने मुझे राजपथ दिखायो-

बिस्वास एक राम-नाम को।

मानत नहिं परतीति अनत ऐसेई सुभाव मन बामको।

हनुमान के पास ये रसायन है।

सुमिरि पवनसुत पावन नामु।
अपने बस करि राखे रामु।

और आपको गुरु आशीर्वाद दे, आपके गुरु कोई वस्त्र दे दे, आपको गुरु तिलक करे, कोई बुद्धपुरुष अपनी पादुका दे दे; यद्यपि सबकी महिमा है। लेकिन सबसे श्रेष्ठ दान गुरुओं की ओर से मिलता है वो नामदान है। पूरा पंजाब नामदान पर जीता है। पंजाबी भाई-बहन आयेंगे तो कहेंगे, 'नामदान करो।' सबसे श्रेष्ठ दान नाम है। सबसे हसीन इनाम है तो वो हरिनाम है।

कुदरत ने जो हमको बक्षा है, वो सबसे हसीं इनाम है ये।
छू लेने दो नाजुक होठों को...।

ये भक्तिगीत नहीं तो क्या है? फिलम का गीत रख दो एक ओर, ये भक्तिगीत है। जुबां पूजारी बने तो; आंख पूजारी बने तो।

अच्छे को बुरा साबित करना दुनिया की पुरानी आदत है। बुरा कहना ही क्या, साबित करना! दुनिया के स्वभाव का कितना अद्‌भुत निरूपण है ये?

इस मय को मुबारक चीज समझ
माना कि बहुत बदनाम है ये।
कुदरत ने जो हमको बक्षा है...

शरमा के न यूं ही खो देना, रंगीन जवानी की घड़ियां,
बेताब धड़कते सीनों का अरमान भरा पयगाम है ये...

युवान भाई-बहन, तुम 'हरिनाम' लो तो शरमाना मत कि हम माला कैसे रखें? हम बेरखा कैसे रखें? कोई तुम्हें कहे कि जवानी में कथा सुनने की क्या जरूरत है? तो, शरमाना मत। उसके लिए शुभकामना करना कि तुम रंगीन जवानी की घडियां चुक गये!

जो तुम्हें सिखाये कि जवानी में कथा सुने क्या? जवानी में सुनते ही क्या, जवानी के लोग कथा कराते हैं! और सपरिवार सुनते हैं! ये क्रांति है। मैं देख रहा हूं आखिरी करीब पैंतीस साल से कथा करनेवाले सपरिवार कथा सुनते हैं। वर्ना कथा एक एइज का विषय बन चुकी थी! संसार के कोई काम के नहीं वो सब हमारे काम के! और वो भी आकर सो जाते मानो मैं लौरी सुनाता हूं! अतिथि को हम ताजेतरोजे फल देते हैं ताकि आंगन की इज्जत रहे। ईश्वर को जब जिंदगी देनी है तब बूढ़ापा, दुर्गंध भरा शरीर नहीं दिया जाय, जवानी दी जाय। ये ताजातरोजा जीवन दिया जाय। विवेकानंदजी ने कहा, मुझे पचास नचिकेता दे दो। विश्व की सकल बदल दूं और पूरी दुनिया को कह दूं कि -

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथतत् कवयो वदन्ति।

युवानी में सुन लो साहब। आदमी युवानी में कमाई कर लेता है तो बूढापे में चिंता नहीं रहती। 'हरिनाम' की कमाई जवानी में थोड़ी कर लो। लोग कथा सपरिवार सुनते हैं ये इक्कीसवीं सदी का सगुन है।

राम-रसायन मानी 'रामचरित मानस' और राम-रसायन मानी लीला भी रसायन, रूप भी रसायन, धाम भी रसायन, अवश्य। और नाम भी रसायन। लेकिन हम जैसों को यही रसायन अनुकूल पड़ेगा जो नाम-रसायन है।

एहि महं रघुपति नाम उधारा।
अति पावन सो पुरान श्रुतिसारा।

मैं प्रार्थना करूं, बच्चों को पीझा, मेगी खिलाओ; मुझे कोई आपत्ति नहीं है, वेजिटेरियन होना चाहिए। उसमें कोई अंडा-बंडा न होना चाहिए ये ध्यान रखना। लेकिन प्लीज़, बाजरे की रोटी भूला मत देना! गेहू की रोटी भूला मत देना! गरीबों की जुवार भूलाना न चाहिए। फास्ट फूड खाओ, मैं मना नहीं करता। लेकिन अधिक मात्रा में मत दो, प्लीज़! उसको गौ का दूध पिलाओ। अपना भारतीय खोराक मत भूलो यार! ये बच्चे अपना खोराक न भूल जाये साहब! और बच्चे भूल से भी इधर-उधर का न पीए उसका ध्यान रखना।

मुझे कल पत्रकारों ने पूछा, 'गौहत्या बंद होनी चाहिए?' मैंने कहा, टोटली बंद होनी चाहिए। केवल भारत में नहीं, पृथ्वी के गोले पर गौहत्या बंद होनी चाहिए। केवल श्रद्धा और धार्मिक ढंग से मैं नहीं बोल रहा हूं। गौ हमारे अर्थ का मूल है। मेरा ठाकुर आया था गौ के लिए।

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।

और गौहत्या टोटली बंद करनी है तो गौ पालना। हम चिल्लाये, नारे लगाये, इससे बेटर है कि संपन्न लोग गो पाले, रखे। अथवा न रख सके तो जहां गौसदन हो वहां गाय के पालन के लिए कुछ राशि दे। गौ पलनी चाहिए। उद्धार करने लगो तो संहार बंद हो जायेगा। पहले प्रस्थापित करो। गौसेवा हम करेंगे। निर्णय करो यार कि हम गाय का दूध पियेंगे। मैं आपको कोई संकल्प नहीं करा रहा हूं। लेकिन खबर नहीं, क्या हो गया है हिन्दुस्तान को! पूरी दुनिया में गौ का दूध पीया जाता है और ये कृष्ण का मूलक यहां गाय का दूध नहीं! सोचो! गाय को जब वरदान मिला तो तैंतीस कोटि देवता गाय के शरीर में आ गये। और लक्ष्मीजी देर से आई! तब लक्ष्मीजी ने कहा, 'गौमाता, मेरा स्थान कहां?' बोले, 'माताजी, मैं क्या करूं? आप देर से आई! सब देवताओं ने मेरी खरी से लेकर सिंग तक सबने अपने स्थान चुन लिये हैं।' तब गाय ने कहा, 'गोबर बचा है।' और साहब, भारत में गोबर में लक्ष्मी का निवास कहा है! गोबर जो है उसका खाध बनता है, खाध खेत में जाता है, अच्छी फसल पकती है, इससे आदमी निभता है और दुनिया को निभाता है। गोबर में लक्ष्मी का निवास है। ये भारतीय दर्शन गज़ब है। गौहत्या बंद हो ये अच्छी बात है, लेकिन गौपालन हो ये नारे शुरू होने चाहिए। पहले उद्धार; संहार अपने आप रुक जायेगा। तो, गाय पर तो हमारी पूरी इकोनोमी रहती थी उस समय में। दुनियाभर के देश गाय का दूध सेवन कर रहे हैं।

तो बाप, इस राम-रसायनवाली कुछ विशेष चर्चा है। थोड़ा जो समय बचा है इसमें कथा का क्रम ले लूं। कल हम सबने मिलकर संक्षेप में रामजन्म का उत्सव मनाया। यहां कैकेयी ने भी पुत्रजन्म दिया। सुमित्रा ने भी पुत्रों को जनम दिया। अयोध्या में रामजनम के बाद ब्रह्मानंद और परमानंद के दिन थे। और ये आनंद की मग्नता में तीस दिन कैसे चले, किसीको पता नहीं चला! उसके बाद नामकरण संस्कार हुआ है। कौशल्यानंदन का नाम राम रखा। कैकेयी के पुत्र का नाम भरत; सुमित्रा के शत्रुघ्न और लक्ष्मण। उसके बाद विद्याभ्यास के लिए गये हैं। अल्पकाल में चारों ने विद्याप्राप्त की। और जो विद्या प्राप्त की वो चरितार्थ कर रहे हैं। विश्वामित्र महाराज का आगमन होता है। यज्ञपूर्ति के लिए राम की मांग करते हैं। पहले तो महाराज दशरथजी बिलकुल मना कर देते हें, लेकिन बाद में वो राम-लक्ष्मण को दे देते हैं भगवान विश्वामित्र के संग लखन सह। ताडका को निर्वाण दिया। दूसरे दिन दोनों भाई रक्षक के रूप में। यज्ञ का आरंभ हुआ। मारीच को सतजोजन फेंका! सुबाहु को निर्वाण दिया!

विश्वामित्रजी राम से कहते हैं, एक धनुषयज्ञ हो रहा है। जनकजी बुला रहे हैं। मुझे जाना होगा, आप आयेंगे? निकल पड़े। रास्ते में अहल्या का उद्धार किया। और प्रभु जनकपुर पहुंचे। नाम-रूप मिथ्या माननेवाले जनक नाम जानने में उत्सुक हो गये और रूप देखने में डूब गये! विश्वामित्र ने जनकजी को कहा कि महाराज, 'ये प्रिय सबहि जहां लगि प्रानी।' इन्होंने मेरा मन भी मोह लिया है, क्योंकि ये दुनियाभर के प्रिय तत्त्व है। आनंद हुआ है। मिथिला में एक सुंदर सदन है वहां राम-लखन, और मुनिगणों के साथ विश्वामित्र ठहरे हैं। गोस्वामीजी ने लिखा है, 'करि भोजन विश्राम।' विश्वामित्र संग ठाकोरजी ने भोजन किया, फिर विश्राम किया। अब आप सब भी भोजन करे, फिर विश्राम करना।

लीला का मेरे मन में बहुत महत्त्व है। धाम का भी है। मैं समय है तो अयोध्या कभी चक्कर लगा लेता हूं; काशी चला जाता हूं; वृंदावन चला जाता हूं; जगन्नाथपुरी जाता हूं। मैं गायक हूं, तो लीला तो गाता रहता हूं, देखता रहता हूं। ये श्रेष्ठ-निम्न की बात नहीं है, लेकिन मुझे चारों रसायन में से कोई पूछे तो मैं तो नाम-रसायन ही पसंद करूंगा। जैसे कोई मुझे परोसे तो मैं पहला भजिया उठा लेता हूं! और इनमें भी मिर्ची का पहला उठाता हूं! मेरे सामने ये चार रसायन कोई रख दे तो तलगाजरडा सबसे पहले नाम-रसायन पसंद करेगा।

मानस-हनुमानचालीसा :: ७ ::

इक्कीसवीं सदी में शाप नहीं होना चाहिए, समाज को सावधान करना चाहिए

'हनुमानचालीसा' का कुछ दर्शन 'मानस' के आधार पर हम कर रहे हैं। जिसमें इन पंक्तिओं का आश्रय लिया जा रहा है क्रम में-

राम रसायन तुम्हारे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।

गोस्वामीजी कहते हैं कि आपके पास राम-रसायन है और मेरी व्यासपीठ कहती है वो राम-रसायन मानी 'रामचरित मानस' रूपी रसायन के चार विभाग नाम-रसायन, लीला-रसायन, रूप-रसायन और धाम-रसायन। और इनमें भी मुझे पूछा जाय कि इनमें आप किस रसायन की विशेष पसंदगी करेंगे तो ओलरेडी गोस्वामीजी ने की है; हम तो मार्गी है। वो ही मारग पर जा रहे हैं। तो सबसे सुलभ, सर्वग्राह्य ये है नाम-रसायन।

'महाभारत' में, 'महाभारत' का युद्ध समाप्त हो जाने के बाद बाणसय्या पर जब भीष्म है; और यहां श्रीकृष्ण निमंत्रित करते हैं पांडवों को कि ये आखिरी अवसर है। धर्मराज, भीष्मदादा से जो जानना है वो जान लो, वर्ना ये अध्याय पूरा हो जायेगा। कृष्ण की अगवानी में सब आये हैं। तब बहुत से प्रश्न युधिष्ठिर भीष्मदादा को पूछते हैं। इनमें एक प्रश्न पूछा, 'दादा मुझे बताओ, सुबह में उठकर आदमी को किसका नाम लेना चाहिए? और इस नाम के साथ किसका ध्यान करना चाहिए? और यदि व्यक्ति नामप्रेमी नहीं है तो किस मंत्र का जप करना चाहिए?'

भीष्म कहते हैं, युधिष्ठिर, पांडव, बाप! सुबह में उठते ही कृष्ण का नाम लेना चाहिए। और प्लीज़, कोई भेद

न समझे राम, कृष्ण, शिव, दुर्गा। इसीलिए कल शुक्ल यजुर्वेदियों कुछ सूत्र को मैंने कहा कि वहां, 'ऋचोनामास्मि ...'। ऋग्वेद कहता है मैं नाम हूं। वहां नहीं लिखा है कि मैं रामनाम हूं, कृष्णनाम हूं, मैं शिवनाम हूं। मैं नाम हूं। वेद छोटी बात नहीं कर सकते। छोटी बात करे ये वेद नहीं, ये तो समझ की वेदना है! ये तो समाज का कष्ट है! अब 'महाभारत' के व्यास का ये स्पष्ट अभिप्राय है कि कृष्णनाम लेना चाहिए। और यदि मंत्र जपना है तो 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' ये मंत्र की ओर 'महाभारत' संकेत करता है कि ये जपना चाहिए। 'वासुदेवाय' कृष्णमंत्र है और तुलसी को कोई मुश्किल नहीं। तुलसी सेतु करते हैं -

द्वादस अक्षर मंत्र पुनि जपहिं सहित अनुराग।
बासुदेव पद पंक रुह दंपति मन मति लाग।।

'वासुदेव' शब्द है। अब वहां भी थोड़े हमारे राम के आग्रहवादी जो लोग हैं वो कहते हैं, ये द्वादश अक्षर मानी 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'वाला नहीं है। वो तो 'राम रामाय नमः' वो षडाक्षर फिर सीताजी का षडाक्षर! अरे, ये कसरत क्यों करते हो? 'महाभारत' पढ़ लो तो कोई भेद नहीं रहेगा! मैं वो मंत्र लिखकर लाया हूं 'महाभारत' का। भीष्म कहते हैं -

तपः स्वरूपो महादेवः क्रिष्नो देवकीनंदन
तस्य प्रसादात दुःखस्यनाशम्। प्राप्यसि मानदः
एकः कर्ता स कृष्णश्चज्ञानीनां परमागति
तस्मात् व्रज ऋषिकेशम् कृष्णं देवकीनंदनम्।

अरे साहब, पहला ही वाक्य भीष्म का है, ये कहते हैं कि हे धर्मराज, तप स्वरूप में कृष्ण शंकर है, महादेव है। न राम-कृष्ण का भेद। न शंकर-राम का भेद। न वासुदेव-राम का भेद। ये किसने अध्यात्म को बिगाड़ने की कोशिश की है? इतिहास में सत्ता पलटती है तो हेराफेरी कर देते हैं लोग! माफ नहीं किया जाना चाहिए! चलो क्षम्य है, लेकिन प्लीज़, अध्यात्म में हेराफेरी न हो। अध्यात्म, अध्यात्म है।

फिर कृष्ण ने वो त्रिभुवन विमोहित स्मित किया। क्या युधिष्ठिर कृष्ण के ऐश्वर्य को नहीं जानता था? जानता था। लेकिन केवल जानकारी पर्याप्त नहीं। कोई अधिकारी बुद्धपुरुष कहे कि कृष्ण क्या है? तभी पूर्ण पहचान होती है। अर्जुन, सहदेव, नकुल, धर्म सब की आंखें उस समय डबडबा गई कि ये आदमी, जिससे हमने सारथ्य करवाया! जो तप स्वरूप साक्षात् शंकर है! जिसका सुबह-सुबह नाम लेने का आदेश भीष्म करते हैं। तो बाप, 'महाभारत' भी कहता है कि राम-रसायन कृष्णनाम है, रामनाम है, हरिनाम है। और ये रसायन हनुमानजी के पास है।

तो, राम-रसायन यानी 'रामचरित मानस'। इनमें भी हरिनाम ये रसायन श्रीहनुमानजी के पास है। लेकिन 'रामचरित मानस' जब राम-रसायन है तो जरा ओर गुरुकृपा से दर्शन करें कि सात कांड में कौन एक-एक प्रधान व्यक्ति ने इस राम-रसायन 'बालकांड' में सबसे ज्यादा राम-रसायन जिसने पाया है, यद्यपि नसनस में सब जगह रसायन ही रसायन है, लेकिन इसमें से मुझे चुनना है आप से बातचीत करने के लिए तो मुझे कहने दो, सब से ज्यादा राम-रसायन 'बालकांड' में अहल्या ने पीया है। ये महिला बहुत पी गई राम रसायन। पूरा छंद अहल्यावाला, इनमें राम-रसायन के संकेत भरे पड़े हैं।

मैं दो दिन से आप से चर्चा कर रहा हूं कि तुलसीदासजी रामकथा शुरू करते हैं तो अयोध्या से शुरू करते हैं, लेकिन नामकथा शुरू करते हैं तो गौतम के आश्रम से ही क्यों शुरू करते हैं? 'नाम एक तापस तिय तारी...' वहां से मंगलाचरण हो रहा है नाम-रामायन का। क्या राज़ है, क्या रहस्य है ये? अहल्या को शाप दिया, वो जड़ हो गई! और हमारे शास्त्रों में जो बुद्धि भोगआसक्त हो जाये उसको जड़मति ही कहा है। इन्द्र को कहा, तेरे शरीर में हजार छिद्र हो जायेंगे! अब घडे में एक छोटा-सा छिद्र हो, तो जल हो या कोई भी रस हो थोड़ा-थोड़ा स्रवते हुए ये निकल जायेगा। जिस घडे में एक हजार छिद्र हो! तेरा पुन्य तेरी वासना के छिद्र से धीरे-धीरे खत्म हो जायेगा!

अब थोड़े मेरे विचार पेश करूं आप इजाजत दे तो। मुझे भी कुछ कहना है। ये शाप और आशीर्वाद कब तक दुनिया में चलेगा? कब तक? आशीर्वाद फूसलाना नहीं है? पहले तो निश्चित करो कि आशीर्वाद देने का अधिकारी कौन है? अधिकार के बिना आशीर्वाद भी एक जैसे द्वैत-अद्वैत सिद्धांत, एक 'वाद' बन जायेगा। लेनीनवाद, मार्कसवाद, समाजवाद। ये कहीं राजनीति न हो जाये! निकालो वाद। 'मानस' वाद शब्द पसंद नहीं करता है। यद्यपि 'वाद' कृष्ण की विभूति है, आइ ऐग्री। लेकिन यहां श्लोक में व्यवस्था नहीं होगी वर्ना वाद के आगे कृष्ण बोल देते संवाद में हूं। वाद-विवाद-दुर्वाद मैं नहीं, 'संवाद' मैं हूं, ऐसा बोल देते।

आशीर्वाद देने के कोई-कोई अधिकारी होते हैं। आशीर्वाद देने की पहली शर्त है टोटली विशुद्ध अंत:करण होना चाहिए। हम और आप शुभकामना व्यक्त करे ये ठीक है, अच्छी भावना है, सद्भावना है लेकिन हमें ये पता भी रहना चाहिए कि हम में आशीर्वाद देने का नितांत विशुद्ध अंत:करण है? दूसरा सूत्र है, जिसने द्वैत को तद्दन मिटा दिया है वो आशीर्वाद देने का अधिकारी है। जिसमें मेरा-पराया खतम हो चुका है ये आशीर्वाद देने के लायक है। अधिकतम मात्रा में जिसका भजन हो, पूर्ण मात्रा तो मैं नहीं कह सकता; वो आशीर्वाद दे सकता है। चौथी शर्त, बहुत घाटे का सौदा है! आशीर्वाद सफ़ल हो इसीलिए जो अपने प्राण देने की भी परवा न करे वो आशीर्वाद दे सकता है।

'रामचरित मानस' में भी 'आशीर्वाद' शब्द कम पाओगे, 'आशिष' शब्द ज्यादा पाओगे। 'आशिष' प्यारा शब्द है, संशोधित शब्द है। आशीर्वाद में 'वाद' है। अब जो इक्कीसवीं सदी चल रही है उसमें शाप नहीं होना चाहिए, समय पर साधु को समाज को सावधान करना चाहिए। 'तेरा ये हो जायेगा', ऐसा नहीं निकलना चाहिए। 'बेटा, जरा सावधान हो जा; जरा रुक जा', ऐसा कहना चाहिए। मेरी समझ में ये आया कि ऋषि-मुनि शाप देते हैं, साधु कभी शाप नहीं देते। शाप दे वो साधु नहीं। और साधु वो है जिसका टोटली अंत:करण विशुद्ध है। साधु वो है जो तत्त्वत: बिलकुल द्वैत को नष्ट कर चुका है। निज-पर जिसका खत्म हो गया है, और साधु वो है, 'जेने सदाये भजन नो आहार।' वो निरंतर भजन का आहार करता है। और साधु वो है कि आशीर्वाद सफ़ल करने के लिए खुद की कुरबानी दे दे। मुझे 'मानस-सावधान' पर एक कथा करनी है।

सावधान मन करि पुनि संकर।

मनोरथ तो करता रहता हूं, ख़बर नहीं अल्लाह पूरा करे! शुभ भाव तो प्रगट करें। हो तो हो लेकिन ईच्छा तो है। इक्कीसवीं सदी का बुद्धपुरुष शाप न दे। यद्यपि बुद्धपुरुष दे सकता है, लेकिन बुद्धपुरुष देता नहीं। दे तो बुद्धपुरुष नहीं, बुद्धु! अबुध! ये कर्कशता समाज में क्यों है? मैं समझ नहीं पा रहा हूं। सावधान करो। अपने मन को सावधान करो, अपनी बुद्धि को सावधान करो, अपने चित्त को सावधान करो, जो अहंकार हमें सूला देता है इस अहंकार को सावधान करो। शाप नहीं होना चाहिए। सावधान करना चाहिए। आशीर्वाद की जगह समाधान आ जाये और शाप की जगह सावधान आ जाय तो जरा एक प्रयोग तो करके देखो। तुझमें यदि संपदा है तो आश्रित को आशीर्वाद की जरूरत नहीं, समाधान की जरूरत है।

आशीर्वाद में लोग चमत्कार की गंध देखते हैं कि चमत्कार हो जायेगा! बहुत बड़ा चमत्कार तो ये है कि हमें मन में समाधान हो जाये। तो यहां गौतम ने शाप दिया। अहल्या को शीलादेह, इन्द्र को शरीर में इतने छिद्र हो जाये। परमात्मा से तू अप्रिय बन जा ये गर्भित शाप है। और ईश्वर का अप्रिय हो जाना विश्व का सब से बड़ा शाप है। हमारा इष्ट हम से रुठ जाय तो! इन्द्र जैसे संपन्न व्यक्ति को ये बहुत कड़ा शाप है मेरी दृष्टि से। अब अहल्या को पथ्थर होने का जो शाप ये भी तो बड़ा ख़तरनाक शाप हो गया। क्योंकि पथ्थर कहीं जा नहीं सकता। तो पहला शाप तो ऋषि का ये हो गया कि तू यहां से कहीं जा नहीं पायेगी। तू तीन भक्ति नहीं कर पायेगी। और इससे बड़ा शाप क्या हो सकता है? पहली भक्ति है 'मानस' में-

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा ।

अब तू पथ्थर की तरह पड़ी रहेगी, किसी संत के पास जा नहीं सकेगी! अहल्या की पहली भक्ति गई। और 'दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।' दूसरी भक्ति, कथा भी तू नहीं सुन पायेगी! क्या शाप है! पथ्थर होने के नाते तू किसीके काम में नहीं आयेगी। गुरुचरण की सेवा तू नहीं कर पायेगी। मेरी तलगाजरडी आंखें देखती है, अहल्या को ये तीन शाप प्राप्त हुए है। इन्द्र को ईश्वर की अप्रियता का शाप और अहल्या को तीन भक्ति से वंचित होने का शाप। आप सोचो, हमारा सत्संग छूट जाय, हमारा कथाश्रवण छूट जाय और हमारा गुरुआश्रय छूट जाय तो जीवन में बचा क्या है यार? इससे तो मर जाना बेहतर! क्या बचा? बंदगी करो अल्लाह की, परमात्मा की कि हमारा कुछ भी हो जाय लेकिन हमारा सत्संग न छूटे। मीरां कहती है-

साधु रे पुरुषनो संग,
बेनी म्हारे भाग्ये मळ्यो छे कोई
साधु रे पुरुषनो संग...

मैं दिल से कहता हूं, मैं कुछ मांगता तो किसीसे नहीं हूं, परमात्मा से भी नहीं मांगता लेकिन मेरे मन में ये मनोरथ रहता है कि हरि, कुछ भी करना, कथा बंद मत हो जाय। मैं गाता रहूं, मैं गाता रहूं।

गुर पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान ।
चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान ।।

तो, अहल्या चुक गई गुरु सेवा। गौतम उनके पति भी है और गौतम की लायकात जो ग्रंथों में मिली है इससे वो सद्गुरु भी है। उसकी सेवा छूट गई अहल्या से। ये तो प्रभु ने कृपा की और जड़मति अहल्या चैतन्य हुई फ़िर चौथी भक्ति से भक्ति शुरू हो गई। फ़िर चौथी भगति शुरू हो गई। साधु क्या करता है कि जो भगति हम से न हो तब तक साधु साथ देगा। कोई ऋषि आयेगा, कोई विश्वामित्र आयेगा ये शुरू करा देगा। लेकिन इतनी भक्ति शुरू कर देंगे उसके बाद साधु कहेगा कि अब तेर में सामर्थ्य आ गया चौथी भक्ति से अब तू खुद शुरू कर।

'मानस' में रामनाम के रसायन का आरंभ अहल्या के प्रकरण से क्यों हुआ? क्योंकि उसके बाद, अहल्या तो कहीं जा नहीं पाती है। तो महाराज विश्वामित्रजी राम-लखन को लेकर अहल्या तक आ गये। और ध्यान देना, राम के चरण एक 'रा' है दूसरा 'म' है। त्रेता में राम आये थे। आज हमारी जड़मति अहल्या का उद्धार करने के लिए 'रामनाम' आयेगा। रामनाम का आरंभ, राम-रसायण का आरंभ अहल्या से मंगलाचरण हो रहा है! ये क्रांतिकारी कदम है तुलसी का। और राघव नंगे पैर आये हैं। 'र'कार और 'म'कार परमात्मा के नाम का नाम है।

आप को कोई गुरु की पादुका मिल जाये तो इसको हीरा-रत्न-चांदी-सोने से मढ़ा दो ये तुम्हारी बात है लेकिन पादुका आख़िर है क्या? 'रामनाम' ही तो है। 'राम-रसायन' है पादुका। पादुका है परमात्मा के चरण। और चरण है 'र'कार और 'म'कार। और ध्यान दो, अहल्या का उद्धार राम के पैरों से नहीं हुआ है, नहीं हुआ हैं, नहीं हुआ हैं। रज से हुआ है। विश्वामित्र क्या कहते हैं? परिचय तो देखो! गौतम नारी है। एक त्यागी, तपस्वी, एक विद्यावान पुरुष की नारी है। और कोई समर्पिता स्त्री किसीका पैर नहीं चाहती, कृपा की रज चाहती है; उद्धारक चरणधूली चाहती है। राम के पैर हो तो इससे क्रांति नहीं होगी। खाली रामनाम हो इससे भी क्रांति नहीं होगी। रज चाहिए! और ये कदम जहां अहल्या का आश्रम है वो मिथिलांचल की भूमि लग गई है। जानकी तक पहुंचने का ये रास्ता है। ये भक्ति का रास्ता है। भक्तिरज न हो यानी स्नेह न हो, यानी प्रीत न हो तो 'र'कार इतना फायदाकारक नहीं होगा। रज के रूप में स्नेह भी हो। रज चाहिए। यहां से शुरू होता है राम-रसायन, जिससे बहुत लाभान्वित 'बालकांड' में हुई अहल्याजी।

परसत पद पावन सोक नसावन प्रगट भई तपपुंज सही।
देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही।

अहल्या सचेत हो जाती है। राम-रसायन

उसको प्राप्त हुआ। हम कितने ही बड़े हो, लेकिन कोई हम को बहुत कष्ट दे, श्रापित करे, कोई हमारे लिए बहुत कुछ कह दे तो फ़िर उसके प्रताप से मानो कोई अच्छा परिणाम भी आ जाये। राम आ गये। लेकिन जीव का स्वभाव है, थोड़ी कटुता रहेगी कि मेरा कुसूर तो था कि इन्द्र में मैं फंस गई! लेकिन गौतम का शाप बड़ा कड़ा है। फरियाद तो कर सकती है। लेकिन जिन्होंने रामनाम स्नेह से लिया है उसकी शिकायत टूट जाती है! वो क्या बोलती है? 'मुनि श्राप जो दीन्हा अति भल कीन्हा परम अनुग्रह मैं माना।' ये 'श्राप' तो भाषा है। मुझे 'सावधान' कर दिया। मुझे एकदम भान में ला दिया कि ख़बरदार! बुद्धि में त्याग हो, बुद्धि में तपस्वी का संग हो फिर भी बुद्धि आख़िर बुद्धि है, वासना कब प्रवेश कर जाये अहल्या, कोई ठिकाना नहीं।' वहां एक शब्द लिखा है, 'देखत रघुनायक', अब देख रही है। इससे पहले वो अंध थी। कामांध, मोहांध, विषयांध, जो कहो! तुलसीदासजी ने अद्‌भुत कहा, आदमी की दो आंख होती है और दो आंख का नाम 'रामायण' में लिखा है-

ग्यान बिराग नयन उरगारी ।

हमारी आंख जानकारी की होती है, लेकिन एक आंख नहीं है! विरागवाली आंख नहीं है। इसीलिए एक ओर ज्ञान भी है, एक और राग भी है। एक और तपस्वी की पत्नी भी है और एक ओर इन्द्र का आकर्षण भी है। विरागवाली आंख फूटी है! और आज चरणरज के अंजन ने वो आंख भी खोल दी। बैरागवाली आंख भी आ गई। तो जब हरिनाम स्नेहसिक्त पुकारा जाय तब आदमी की विचारधारा बदलती है और उसको शाप देनेवाला सावधान करता दिखाई देता है। 'रामनाम' स्नेह के साथ जिसके जीवन में आ जाता है ये शीला शिलाजित हो जाती है; एक अद्‌भुत औषधि बन जाती है। आदमी का शक्तिवर्धन करती है। आदमी की स्फूर्तिवर्धन करती है। आदमी की स्मृतिवर्धन करती है। आदमी की प्रसन्नता का वर्धन करती है। ऐसे सब औषधि के लक्षण उनमें आने लगते हैं। मुझे इतना कहना था कि 'बालकांड' में अहल्या ने राम-रसायन भरपूर पीया है, भरपूर पाया है।

'अयोध्याकांड' में राम-रसायन प्राप्त किया है श्री भरतजी ने। घूंट-घूंटकर पीया है भरतलालजी ने। उसको पादुका प्राप्त हुई। पादुका मानी रामनाम का रसायन प्राप्त हुआ है। और गुरु ने नहीं दिया है। जिसका नाम है रसायन, वो रसायन वैद ने स्वयं अपना रसायन कृपा करके भरत को दिया है।

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।

तो भरत ने भरपूर पीया। यहां वो रसायन अमृतरूपा है।

'अरण्यकांड' में राम-रसायन का बहुत बड़ा अधिकार एक व्यक्ति को प्राप्त हुआ वो मातृशरीर शबरी है। मैंने बनारस की कथा में शायद स्पर्श किया इस बात का कि एक आश्रम शायद शबरी का ऐसा है 'मानस' में, चौदह साल की वनवास की यात्रा में भगवान जो-जो मुनि के आश्रम में जाते हैं वहां से बिदा लेते हैं। लेकिन शबरी का आश्रम एक ऐसा है कि वहां प्रभु आये, बिदा नहीं होते हैं। तुलसीदासजी कहते हैं, योग अग्नि में शबरीजी भगवान के चरण में लीन हो गई। ऐसा रसायन शबरी ने पाया कि वियोग समाप्त हो गया। शबरी नामप्रेमी है।

'किष्किन्धाकांड' में तो जिसके पास राम-रसायन है, उसी स्वयं रसायनशास्त्र के आचार्य हनुमानजी की एन्ट्री है-

राम रसायन तुम्हरे पासा ।

तो 'किष्किन्धा' में हनुमानजी महाराज राम-रसायन में डूबे हैं। 'सुन्दरकांड' में राम-रसायन पाया माँ जानकी ने। रूप- रसायन तो था जानकी के पास। रूप का अनुसंधान तो जरूर रहा लेकिन नाम चुक गई तब हनुमानजी ने वो राम-रसायन उपर से डाला। 'दीन्हि मुद्रिका डारि तब।' और मुद्रिका के रामनाम को पढ़ते ही जानकी का राम-रसायन शुरू हो जाता है। मेरी समझ में 'सुन्दरकांड' में अद्‌भुत रूप में राम-रसायन पाया है जानकीजी ने।

आश्चर्य होगा, लेकिन 'लंकाकांड' में एकमात्र आदमी है राम-रसायन को प्राप्त करनेवाला वो लंकेश रावण है। साहब! उसके पास ऐसा राम-रसायन था कि वो जोली में नहीं रखता था; जेब में नहीं रखता था; अलमारी में नहीं रखता था; बुद्धि में नहीं रखता था; जबान पर नहीं रखता था; नाभि में रखता था कि ये अमूल्य औषधि है। मेरी समझ में रावण राम-रसायन की गरिमा को बहुत जानता था। मुझे पूछो तो मैं कहूंगा कि नाभि में 'राम-रसायन' का कुंभ रखता था। और साहब, उसको डर था कि ढ़ांकन खुल जायेगा तो मेरी मुक्ति हो जायेगी। मुझे मुक्त नहीं होना है, मुझे ठाकुर के चेहरे में युक्त होना है। इस रसायन के कारण वो मर नहीं रहा था। आख़िर में प्रभु ने विभीषण के सामने देखा कि ये बता कि क्या रहस्य है? ये आदमी मरता क्यों नहीं? तब कहा कि प्रभु उसकी नाभि में रसायण भरा है। अमृत भरा है, जब तक ये नहीं फूटेगा तब तक ये मरनेवाला नहीं है। नाभि में जब तीर मारोगे तब घटना घटेगी। और फिर आप जानते हैं कि नाभि पीयूष कुंभ को तोड़ा जाता है तब 'कहाँ रामु रन हतौं पचारी।' क्या मतलब है इसका? ये ललकार क्यों रहा है? ललकारता है, मुझे राम की जरूरत नहीं है, मुझे रामनाम की जरूरत थी। किसने मेरे रामनाम को खंडित किया? इतने में तो ठाकुरजी आ गये। राम के चेहरे में रावण का तेज समा जाता है। इसीलिए मुझे कहना पड़ता है कि 'लंकाकांड' में राम-रसायन रावण ने बहुच चखा है! बहुत गुप्त रामप्रेमी है मेरी समझ में।

'उत्तरकांड' में राम-रसायन किसने प्राप्त किया? 'उत्तरकांड' में राम-रसायन प्राप्त किया बाबा कागभुशुंडि ने। अब वर्गीकरण करो। 'बालकांड' में राम-रसायन एक शिक्षित, सुंदर, एक तपस्विनी, ऐसी एक स्त्री ने पाया। 'अयोध्याकांड' में राम-रसायन एक संत भगत शिरोमणि भरत ने पाया। वहां सुंदरी ने पाया; यहां एक संत ने पाया। 'अरण्यकांड' में कोई ये नहीं कह सकता कि ये कोई एक वर्ग की बपौती है। एक भीलनी रसायन की अधिकारी बन गई। 'किष्किन्धाकांड' में स्वयं जिसके पास राम-रसायन का खजाना है वो, जिसकी आकृति हमनें बनाई है ये एक बंदर है! यद्यपि हनुमानजी साक्षात् शिव है लेकिन विग्रह जो है वो तो पशु का है। 'सुन्दरकांड' में राम-रसायन का अधिकार, ये तो कितनी बड़ी ऊंची पदवी मैथिली जानकी प्राप्त करती है। 'लंकाकांड' में राम-रसायन एक असुर प्राप्त कर गया, असुर शिरोमणि प्राप्त कर गया! 'उत्तरकांड' में एक कौआ पा गया। ये तो वर्गीकरण केवल समझाने के लिए है। इसमें, सात वर्गीकरण में समग्र विश्व आ जाता है। क्योंकि राम-रसायन के सब अधिकारी है।

'रसायन' का मैंने अर्थ बनाया है मेरी जिम्मेवारी से। 'र' मानी रस। रसायन रसरूप होता है। रस नहीं, तो रसायन नहीं। दूसरा अक्षर, 'सा'। 'सा' का अर्थ सात्त्विक। रस तो कई प्रकार के होते हैं। तम भरा नहीं, रज भरा नहीं, सात्त्विक। जो पेय है। मेरी समझ में नहीं आता किसीका रक्त पीना कोई अच्छी बात है? दुनिया में चलता हो, चले! अब बंद करें! स्थूल रूप में

'रसायन' का मैंने अर्थ बनाया है मेरी जिम्मेवारी से। 'र' मानी रस। रसायन रसरूप होता है। रस नहीं, तो रसायन नहीं। दूसरा अक्षर, 'सा' ; 'सा' का अर्थ है सात्त्विक। रस तो कई प्रकार के होते हैं। तम भरा नहीं, रज भरा नहीं, सात्त्विक। रस सात्त्विक हो। फिर 'य' ; 'य' का मेरा अर्थ है यत्नपूर्वक प्राप्त किया रस। चिंतन-मनन द्वारा प्राप्त रस। मुफ्त में मिले उसका मूल्य नहीं रहता है। 'न' ; 'न' का अर्थ मेरी व्यासपीठ करती है नम्रता। रस हो, सात्त्विक हो, यत्न से प्राप्त किया हो और इतनी तपस्या के बाद भी नम्रता ने अहंकार का स्थान न लिया हो वो रसायन है।

पीना भी बंद करो! कई प्रकार के रस का सेवन लोग करते हैं! तो, रस सात्त्विक हो। फिर 'य'; 'य' का मेरा अर्थ है यत्नपूर्वक प्राप्त किया रस। चिंतन-मनन द्वारा प्राप्त रस। मफत में मिले उसका मूल्य नहीं रहता है। अब रामनाम इतना सस्ता है, इतना अमूल्य होते हुए इतना रस्ता है, सरल है, इसीलिए लोगों को लगता है कि 'राम राम' क्या रटे? मूरख, इसके समान अमूल्य कोई नहीं! यत्नपूर्वक मंथन हो, यत्न हो। 'न'; 'न' का अर्थ मेरी व्यासपीठ करती है नम्रता। रस हो, सात्त्विक हो, यत्न से प्राप्त किया हो और इतनी तपस्या के बाद भी नम्रता ने अहंकार का स्थान न लिया हो वो रसायन है।

कृछ विशेष चर्चा कल करेंगे। आज थोड़ा कथा का क्रम। ठाकोरजी 'सुंदर-सदन' में विश्राम कर रहे हैं मिथिला में। राम-लक्ष्मण दोनों नगरदर्शन के लिए जाते हैं। एक संत ने ये भी बताया कि ये दुनिया नगर है उसको देखना चाहिए। लेकिन अकेले नहीं, किसी बुद्धपुरुष की आंखों से देखना चाहिए। वर्ना हम गुमराह हो सकते हैं।

लौटते हैं। संध्यावंदन हुआ। दूसरे दिन राम-लक्ष्मण गुरु आज्ञा पाकर गुरु की पूजा के लिए पुष्प लेने के लिए जनक की पुष्पवाटिका में जाते हैं। और उसी समय जानकीजी का आगमन होता है। तुलसीदासजी आज सीता-राम का प्रथम मिलन पुष्पवाटिका में कराते हैं। पुष्पवाटिका क्या है? आध्यात्मिक अर्थ में सत्संग ही पुष्पवाटिका है और सत्संग में भक्ति और भगवान की भेंट समझ में आने लगती है। जानकीजी प्रभु की रूप मोहिनी जब डूब रही थी ध्यान में तब सयानी फिर वो ही सखी आती है। साधक ब्रह्मरस में कितना डूबे अवस्था के अनुसार कब उसको बचा लेना ये सब स्वीच गुरु के पास होती है। सीयाजू लौटती है। अब मर्यादा है! ये तो जनक की बेटी है। जनकराज के समग्र सुकृत की मूर्ति सीताजी है। अब राम को बार-बार देखना है। जानकीजी बहते झरनें के बहाने, पत्ता हटाने के बहाने, पक्षी बोले तो उसको देखने के बहाने बार-बार ठाकुर का दर्शन कर लेती है। पक्षी बोले तो उससे भी हरिदर्शन कर लेना सीख लेना। बहती नदी के झरने को देखकर भी हरिदर्शन को सीख लेना।

सियाजू सखीओं के संग पार्वती के मंदिर में आती है और फिर स्तुति करती है। जानकीजी को पार्वती ने आशीर्वाद दिया, 'तेरे मन में बसा सांवरा तुझे मिलेगा।' जानकी माँ सुनयना के पास गई। यहां भगवान राम-लक्ष्मण पुष्प चुन कर के आये। गुरु की पूजा की। दूसरा दिन बीता। उसके बाद के दिन में धनुषभंग का अवसर था। भगवान ने एक क्षण के मध्यभाग में धनुष तोड़ दिया। जानकीजी ने माला पहना दी। परशुरामजी बाबा आये। राम के प्रभाव को जानकर वो अवकाश प्राप्त कर गये। दूत गये। बारात आ गई। चारों भाईओं का एक मंडप में ब्याह हुआ है।

रास्ते में निवास करती-करती ये बारात अयोध्या पहुंचती है। दिन बीतने लगे। सभी मेहमान लोग बिदा हो गये। आख़िरी बिदाई रही महर्षि विश्वामित्र महाराज की। पूरा राज परिवार एक संत को बिदा देते हैं। और गोस्वामीजी बड़ी करुण पंक्तियां 'मानस' में अंकित करते हैं-

नाथ सकल संपदा तुम्हारी।
मैं सेवकु समेत सुत नारी।।
करब सदा लरिकन्ह पर छोहू।
दरसनु देत रहब मुनि मोहू।।

दशरथ, जिसके घर स्वयं रघुनाथ बेटा बनकर आये हैं, वो आज साधु की बिदा के समय अपने आप को अनाथ मेहसूस कर रहे हैं और विश्वामित्र को नाथ कहते हैं, 'हे नाथ, ये जो संपदा है ये सब आप की है। मेरे पुत्रों, मेरी पुत्रवधुएं, मेरी रानियां, मेरी ये पूरी भरी दुनिया सब के साथ हे साधु, हम तो आप के सेवक है। आप पर कोई दबाव तो नहीं चलता लेकिन आप को जब भजन करते-करते अवकाश मिले तो कभी हरिस्मरण के साथ हमें भी याद कर लेना। आप हमें दर्शन देते रहियेगा। विश्वामित्र बिदा हो गये। और गोस्वामीजी 'बालकांड' को विराम देते हैं।

मानस-हनुमानचालीसा :: ८ ::

राम-रसायन शुद्ध का उद्धारक है, अशुद्ध का विनाशक है

राम रसायन तुम्हारे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।

श्री हनुमानजी के पास 'राम-रसायन' है, उस पर हम केन्द्रित है। अब एक दिन बचा है और 'हनुमान चालीसा' की ग्यारह कथा के शुभ मनोरथ में अभी एक कथा बची है!

संयमे शीले च धैर्ये वृत्तातेविवेकिनः ।
अन्वेषणेतुशान्तिं सेतुबंधेषड़ेते रसायणाः ।
-महाभारत

भगवान व्यास एक संदर्भ में इन छ बस्तु को रसायन कहते हैं। जब ये प्रमाण मिलते हैं तो बहु बल मिलता है। छ बस्तु गिनाई। एक है संयम। भगवान बादरायण संयम को रसायण कहते हैं। दूसरा शब्दब्रह्म है 'शील'। शील को कृष्णद्वैपायन रसायन कहते हैं। तीसरा है धैय। चौथा है 'वृत्तांतेविवेकिनः'; बातचीत करने में विवेक ये चौथा रसायन है। पाचवां है आदमी अपने भीतर की शांति अथवा उर्जा, ईश्वरप्रदत्त भीतरी सत्ता को अन्वेषण करे, खोजे ये पांचवां रसायन बताया। और छठ्ठा, परस्पर सब को जोड़ने की प्रक्रिया को भी भगवान कृष्णद्वैपायन रसायन कहते हैं। और ये व्यासवचन मेरी व्यासपीठ को इसीलिए बल दे रहा है कि ये छहो 'राम रसायन तुम्हरे पासा' है।

आप निर्णय करके चलें, श्री हनुमानजी के पास संयम है कि नहीं? संयम की प्रतिकृति है श्री हनुमानजी। युवान भाई-बहन, जगत को एन्जोय नहीं करना ये बात नहीं है। लेकिन सत्संग के द्वारा प्राप्त विवेक से संयम के रसायन का सेवन करना। संयम आवश्यक है। मेरी युवान पीढ़ी, जो मेरी कथा का सीधा लक्ष्य है, वो संयम-रसायन

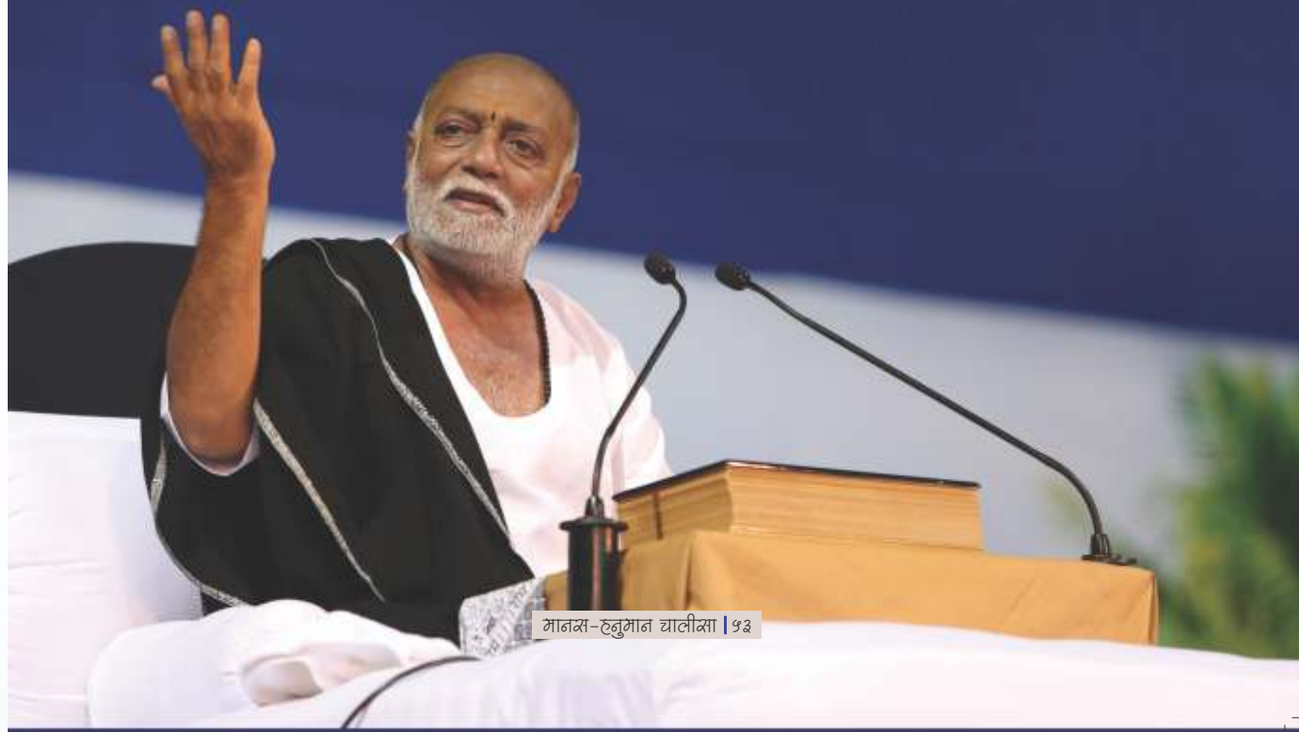

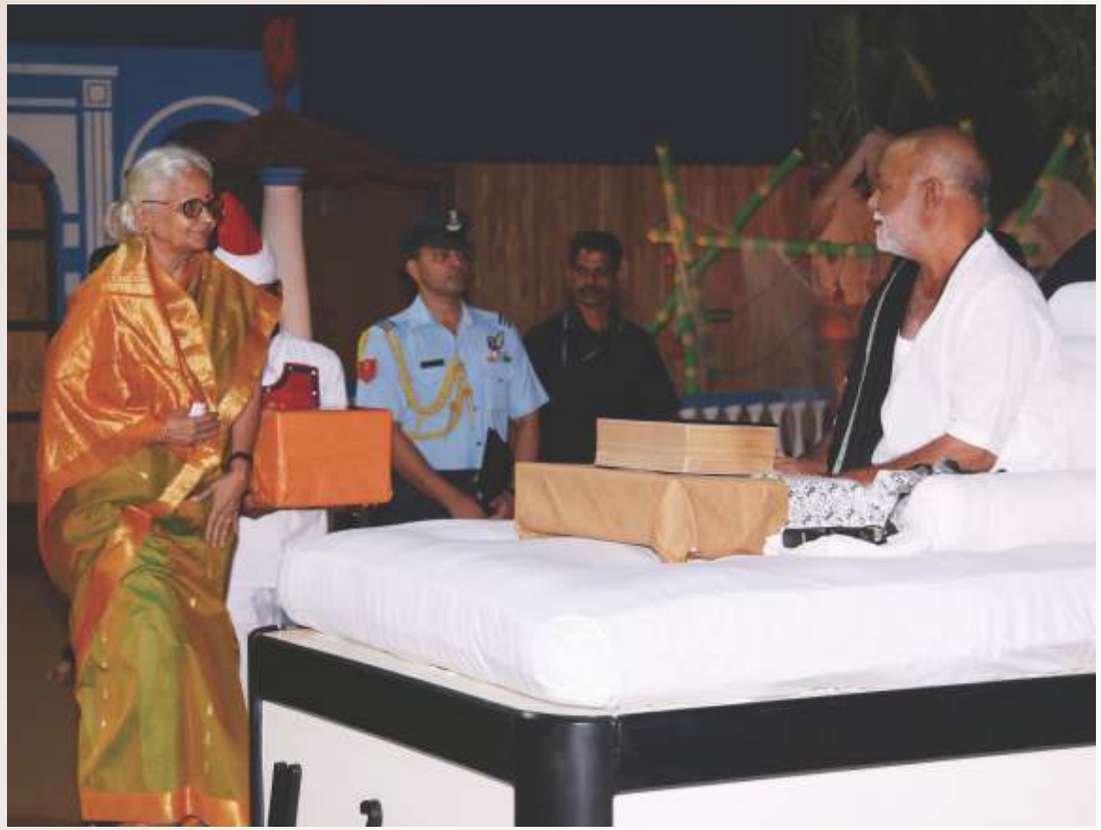

सेवे। और आप पूछे, न पूछे तो भी मैं बोलनेवाला हूं कि संयम-रसायन सेवने के लिए बहुत बड़ा आधार हरिनाम है। आरंभ में लोग कहते हैं कि हम नाम जप करते हैं तो कई और विचार अपने आप दिमाग पर सवार होते हैं! ये भी एक अनुभव लोगों का है। लेकिन कुछ ऐसे न भानेवाले अनुभव के कारण हम प्लीज़, हरिनाम छोड़े ना। क्योंकि अंततोगत्वा यही संयम में मदद करता है। अब संयम क्या? संयम-रसायन मानी क्या? तो फिर मुझे उसकी व्याख्या 'मानस' में खोजनी पड़ती है-

सदगुर बैद बचन बिस्वासा ।
संजम यह न बिषय कै आसा ।।

बिलकुल रेखांकित करते हैं 'संजम' यह। बिषय की आशायें कम होती जायेगी। कम करे ना, प्लीज़। आशा कम करने से आशायें बढ़ती है। कम करे ना। भजन बढ़ाओ, आशायें कम होती जायेगी। 'रामचरित मानस' में आप गुरुकृपा से यात्राएं करे तो आप को दिखाई देगा कि जितने ऋषिमुनिओं के पास राघव गये हैं इन ऋषिमुनिओं ने कुछ न कुछ मांगा है। इनकी कुछ न कुछ आशायें है। यद्यपि अच्छी आशायें है। कोई भक्ति, कोई ज्ञान, कोई बैराग मांग रहा है। आप को एक प्रेमी मिलेगा 'मानस' पर उसका नाम है सुतीक्ष्ण। जो कहता है कि 'महाराज, मुझे मांगना नहीं आता! ये मतलब नहीं है कि मुझे कुछ नहीं चाहिए। लेकिन मुझे मांगना आता नहीं है, कहीं गलत न मांग लूं। और उदार शिरोमणि, मैं जो मांगू आप दे दे और मेरे हित में न हो! मैं कहीं गलत न मांग लूं! आप को जो अच्छा लगे वो दो। चुनाव आप का।'

भरोसा का मतलब ये है। विश्वास का मतलब ये है, चुनाव आप का। जिसमें आश है वो अपनी रुचि के अनुकूल मांगता है। और एक बस्तु याद रखना कि हमारी मांगने की सीमा है। आख़िर हम जीव है। मांग-मांग कर भी हम घाटे का सौदा करते हैं!

मैं 'रामायण' गाता हूं इसीलिए मैं कोई पक्षपाती नहीं हूं, मेरा कोई शठपूर्वक का हठ नहीं है। ध्यान देना। लेकिन युवान भाई-बहनों, मैं आप को जरूर कहूं कि रामकथा खूब सुनो। तुम को समाधान बहुत मिलेगा। और आप को ये रामकथा सावधान भी बहुत रखेगी। एक आदमी को केन्सर हुआ है। प्रथम स्टेज में है। डोक्टर उनको शाप देगा कि तू पापी है, तू पातकी है! डोक्टर उनको सावधान करेगा कि तू अभी भी रुक जा। अभी प्रथम स्टेज में है, रुक, बच जायेगा। और मैं लाख आशीर्वाद दूं, औकात तो नहीं है लेकिन लोग मांगे तो या मैं बोलूं कि तुम सुखी होओ, सुखी होओ! लेकिन सुख और दुःख सापेक्ष है। दुःख आयेगा। आशीर्वाद से क्या होगा? इसलिए समाधान दो कि बेटे, ये रात-दिवस का चक्र है, दुःख आयेगा। लेकिन सुख में राम-रसायन पिओगे तो दुःख भोगने की ताकत आ जायेगी। होंसला बढ़ेगा। दुःख तो आयेगा। कोई बुद्धपुरुष के आशीर्वाद से दुःख नहीं आयेगा ऐसा कभी नहीं होता। इवन बुद्धपुरुषों को भी दुःख आया है। देहधारी बुद्धपुरुषों को भी दुःख आता है।

'रामचरित मानस' सद्गुरु है। ये बुद्धत्व है। ये शाप नहीं देगी, ये सावधान करेगी। और ये आशीर्वाद नहीं, समाधान देगी। और समाधान मिला कि मन मस्त हुआ! धन्य-धन्य हो गया! तो, भगवान शंकर को धूप नहीं लगी। और उसको मैं साहित्यिक भाषा में बौद्धिक ऊंचाई भी कहूं। शंकर तो ज्ञानपीठ के प्रवक्ता है। 'रामायण' तो हृदय में रखा है, लेकिन पीठ तो ज्ञान की है ये। और आदमी बौद्धिक उड़ान जितनी ज्यादा करेगा उसको ताप भी बहुत लगेगा। इस ताप से बचना है तो शंकर जो करते हैं कैलास पर वो करो। वो वट के वृक्ष के नीचे बैठ जाते हैं। 'बट बिस्वास।' बौद्धिक उड़ान के बाद यदि तप्त न होना हो तो विश्वास की छाया में बैठना ही पड़ेगा। वर्ना आदमी जल जायेगा। आख़िर तो कोई विश्वास की छांव चाहिए ही। बड़ों को विवेक चाहिए और छोटों को विश्वास चाहिए। तुम्हारें मन में अच्छी इच्छायें है कि बुरी इच्छायें प्लीज़, इधर-उधर मत पूछना, कोई विश्वास वटवृक्ष की छांव में बैठकर चिंतन करना। कोई शंकर मिल जायेगा। आश हो तो भी विश्वास की छांया में हो। सब की इच्छापूर्ति हो। विश्वास बढ़ाओ, आश अपने आप कम हो जायेगी। व्यासविचार कहता है संयम रसायन है। ये पहला रसायन है। और हनुमानजी के पास ये रसायन भरपूर है। अतुलित बल होते हुए संयम। अतुलित विद्या होते हुए संयम। अतुलित बुद्धि होते हुए भी संयम। तुलसीदासजी तो थक गये इसीलिए कह देते हैं, 'सकल गुण निधानं।' युवान भाई-बहन, मौज करो लेकिन सत्संग से प्राप्त विवेक से। कोई तुम्हें दबाये ऐसा नहीं, हम स्वयं अपने पर राज करे। अपना स्वयं का संचालन खुद करे। ये सत्संग से होता है।

दूसरा विचार में आया, शील रसायन है। शील का एक अर्थ होता है चरित्र भी। कहीं मैंने चर्चा की है, आठ प्रकार के शील होते हैं। सत्य एक होता है, शील बहुत होते हैं। 'मानस' में उसका प्रमाण है-

सौरज धीरज तेहि रथ चाका ।
सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका ।।

'लंकाकांड' में गोस्वामीजी कहते हैं, सत्य और शील ये धजा और पताका है। धजा एक होती है, पतार्के बहुत होते हैं। शील कई प्रकार के होते हैं। कभी-कभी मैं देखता हूं कि सत्संग के कारण लोगों में शील बहुत दिखाई देता है। ये भी मैं महसूस कर रहा हूं। और सत्संग के अभाव में आज का जो मोडर्न समाज है इसमें कभी-कभी शील का अभाव भी दिखता है। मैं 'मानस' के आधार आप को कहना चाहूंगा कि शील यदि प्रगट करना है तो वहां भी इच्छा मत करे। बस, काम शुरू कर दे। कथा से शील मिलेगा। 'सील कि मिल बिनु बुध

सेवकाई।' जो बुझर्ग है, विद्यावान है, जो गुरुजन है उसकी सेवा के बिना कभी शील नहीं मिलेगा, ऐसा तुलसी का मानना है। शील मिलता है किसी बुद्धों की सेवा करने से, ऐसा 'मानस' में है। लेकिन बड़ों की सेवा करो तब भी चाह नही रखो कि वो हमारी सराहना करे। तो फिर गज़ब का मबलख पाक पाओगे। तो शील कई प्रकार के होते है मेरे युवान भाई-बहन, और ऐसा शील सत्संग से हमारे जीवन में आने लगे तो समझना, हमारे में दूसरा रसायन आया है व्यासविचार के अनुसार।

तीसरा, धैर्य। अब श्री हनुमानजी का शील क्या है? अब उसकी चर्चा करने की आवश्यकता नहीं। तुलसी तो कहते हैं, 'सकल गुणनिधानं।' 'जय हनुमान ज्ञान गुन सागर।' तो संयमरूपी रसायन हनुमानजी के पास है, शीलरूपी रसायन हनुमानजी के पास है ओर धैर्यरूपी रसायन हनुमानजी के पास है। धीरज हमारा रसायन है। हम जल्दी-जल्दी उग्र हो जाते हैं! श्री हनुमानजी का धैर्य देखो, पूरी वानरसेना चिंतित थी। अवधि पूरी होने की थी, सीता की कोई ख़बर नहीं! सब धैर्य गंवा बैठे हैं तब श्री हनुमानजी महाराज शांत चित्त से हरिस्मरण कर रहे हैं।

चौथा रसायन है, किसीसे बातचीत करते समय विवेक। मैंने कभी कहा है कि जो किसीको पढ़ाता है, सीख देता है, फिर वो विद्यार्थी और शिक्षक हो, छात्र और अध्यापक हो, शिष्य और गुरु हो, जो हो लेकिन उसमें चार प्रकार के विवेक होने चाहिए। पहला तो समझानेवाले में, आचार्य में तन विवेक होना चाहिए; शरीर का विवेक होना चाहिए। आप क्लासरूम में बैठो, कुर्सी पर बैठो इस समय आप का तन का विवेक ऐसा होना चाहिए कि चालीस चेतना जो तुम्हारे क्लास में बैठी है उस पर गलत मेसेज न जाय। दूसरा, नयन का विवेक। नेत्रों की एक बड़ी अनूठी भाषा होती है। पूरा भाषाभवन है नेत्र। नयन विवेक आता है बुद्धपुरुष के चरण की रज का अंजन करने से। तीसरा विवेक है मन का विवेक। हमारी सोच अच्छी हो। चतुराई ऐसी आ गई कि बोलने में कुछ बिलग होता है, मन में कुछ बिलग चलता है! यही तो दशा है हमारी! मन विवेक हो। और चौथा विवेक बसन विवेक। पहेरवेश का भी एक विवेक होना चाहिए। पहेरवेश बड़ा परिचय देता है। कौन कैसे कपड़ें पहनते हैं उस पर से पता लग जाता है। तो ये विवेक जो है, वृत्तांत करने में एक दूसरे के साथ चर्चा करने में विवेक के रसायन का सेवन हम करें।

पांचवें रसायन का नाम व्यासविचार में आया है वो है शक्ति का अन्वेषण। अपनी अंदर की भीतरी शक्ति की खोज ये रसायन है। ये तो व्यासविचार है लेकिन मुझे इतना बल मिल रहा है इससे कि हनुमानजी शक्ति के अन्वेषक है। उसने सीताशोध की। और सीता परमशक्ति है। जानकी परम ऊर्जा है। अपनी निजी शक्ति को खोजना ये रसायण है, जो हनुमानजी ने किया। और छठ्ठा, परस्पर जोड़ना। मूल में तो यही रसायन है 'रामचरित मानस।' तो, जोड़ने की प्रक्रिया ये भी रसायन है। इन छः को

द्रौपदी का वस्त्राहरण हुआ 'महाभारत' में तब द्रौपदी कृष्ण को देर से याद करती है। चुक गई वर्ना दुःशासन की ताकत नहीं कि उसकी साड़ी के छोर को पकड़ सके! और वहां विकर्ण की जबान पर कृष्ण आया और कहा कि द्रौपदी, ये राक्षसों की सभा है। आज तू कृष्ण को क्यों याद नहीं करती है? हम भूल जायेंगे तो कृष्ण किसी के थू याद दिला देगा कि तेरा जप छूटा जा रहा है! और याद दिलानेवाला शत्रुपक्ष का होगा, मित्रपक्ष का नहीं! और 'रामायण' भी गवाह है कि हनुमानजी को मृत्युदंड का एलान हो चुका था। रावण ने कहा, इसको मृत्युंदंड दे दो। शत्रु का भाई आया और उसने कहा, नीति मना करती है। दुश्मन मदद करेंगे। भरोसा होना चाहिए।

व्यासविचार ने रसायन की संज्ञा दी है। और मुझे ये श्री हनुमानजी में दिखाई देते हैं। वहां तो जो उद्घृत किया गया है, ये रसायणमूर्ति कृष्ण है ऐसा कहा है। और आप को पता है, हमारे देह का आकार ये भौतिक है। उसकी भी महिमा है लेकिन ये देह के पीछे जो दिल धड़कता है उसकी एक मूर्ति होती है उसका नाम है रासायणिक मूर्ति। दैहिक मूर्ति के अंदर एक दिल की मूर्ति, एक दिल का स्वरूप बसता है, जिसको वेदांत स्वरूपानुसन्धान कहते हैं। आप से भी निवेदन करूं कि जहां तक संभव हो, जोड़ते जाईये, जोड़ते जाईये। हनुमानजी ने तो कितने बड़े सेतुबंध की रचना करा की! ये जोड़ने की प्रक्रिया, ये छः व्यास के विचार में रसायन है। और वहां कृष्ण के बारे में ये बात उद्घृत है। और कृष्ण हनुमान ही तो है। कृष्ण को हम गिरिधारी कहते हैं, तो ये (हनुमान) भी गिरिधारी है। वो द्रोणाचल लेकर आया है। कृष्ण इतनी रानीओं के बावजूद भी ब्रह्मचारी है। ये मेरा बाबा भी ब्रह्मचारी है। कृष्ण पशु को चराते हैं, ये खुद पशु है। वहां तो कृष्णपरक ही है लेकिन हनुमान में शत प्रतिशत घटता है।

कहना चाहिए कि हरिनाम से संयम में वृद्धि होती है। हरिनाम से शील का बल बढ़ेगा। हरिनाम से धैर्य धीरे-धीरे अतूट होने लगेगा। हरिनाम से एक-दूसरे के साथ व्यवहार और वार्ता में विवेक बरकरार रहेगा। हरिनाम से व्यक्ति निज खोज कर पायेगा, और हरिनाम से व्यक्ति तोड़ेगा नहीं, जोड़ेगा। ये छः रसायन व्यासविचार के चरितार्थ होंगे हरिनाम से, परमात्मा के नाम से।

उडियाबाबा वृंदावन के एक बड़े सिद्ध संत हो गये। उसने एक संस्मरण लिखा है कि उसके पास मनसिद्धि थी कि कोई क्या बोलते हैं, क्या सोचते हैं, सब जान जाते थे। साधना के आरंभ में उडियाबाबा का परिभ्रमण बहुत रहा। कभी उज्जैन में साधना की, कभी आसाम में; कभी शक्तिपीठों मे भी साधना की। तो वो स्वयं कहते हैं कि मेरे पास उज्जैन के महाकाल की साधना करते-करते ऐसी सिद्धि आ गई कि मैं सब की मन की बात जानने लगा। और ये सब की बात जानने के कारण मेरी नींद खतम हो गई! मैं सोउं और तुरंत ये सिद्धि मुझे दस्तक दे कि वो क्या सोच रहा है, वो क्या बोल रहा है? और पते की बात ये है उडियाबाबा कहते हैं, बड़े घाटे का सौदा ये हो गया कि सिद्धि के कारण मेरा निरंतर सांस-सांस 'राधे राधे' करता था ये सब छूट गया! तब मैंने महाकाल की स्तुति की। वो लिखते हैं; इतने सिद्ध संत लिखते हैं तो बात माननी ही पड़ेगी। बोले, मैंने भगवान शंकर से प्रार्थना की तो कृपा कर के हे महाकाल, मेरी ये सिद्धि खतम कर दे! और छः महिने के बाद ये सिद्धि खतम हुई तब जाके उडियाबाबा कहते हैं, मैं चैन से सोया। आख़िरी रसायन है हरिनाम। बस ये पक्का। तुम 'अहंब्रह्मास्मि' कहो तो भी मुझे कोई आपत्ति नहीं है। ये भी रामनाम है। मुझे क्या आपत्ति है? तुम 'अल्लाहु अल्लाहु' कहो, मुझे क्या तकलीफ़ है? लेकिन कलियुग का तो प्रधान साधन है रामरसायन। ये नाम रसायन है, उसको दृढ़ करना होगा।

एक श्रोता ने प्रश्न पूछा है, 'बापू, रसायन विस्फोटक और विनाशक भी होते हैं। काम-रसायन से लोकसंख्या के विस्फोट का खतरा बढ़ गया है। धर्म-रसायन विस्फोट से जाति-देश और संप्रदायों में लड़ाईयां हो रही है!' कुछ तो चर्चा करने को मज़बूर करेगी। यानी धर्म ऐसा नहीं कर सकता लेकिन जब कट्टर धर्म हो जाता है कोई; कट्टरता आ जाती है, तो जाति संप्रदाय, फल्लां-फल्लां उसमें संघर्ष होता है। तो ये भी विस्फोटक बन जाता है। तो धर्म-रसायन भी विस्फोटक बनता है जाति, वर्ग और संप्रदाय भेद के कारण। आगे लिखा है, भक्ति-रसायण पीनेवाले लोगों को खूब त्रास सहन करना पड़ता है। अपना पूरा जीवन ही कुरबान करना पड़ता है। और नामवाले व्यक्ति की आज़ादी खतरे में पड़ जाती है। बापू, राम-रसायन की विस्फोटक क्षमता मैं नहीं जानता। मुझे तो केवल इतना जानना है कि राम-रसायन विनाशक है

या उद्धारक?' दोनों हैं। राम-रसायन उद्धारक भी है और विनाशक भी है। राम-रसायन शुद्ध का उद्धारक है, अशुद्ध का विनाशक है। आप के सामने सीधी चौपाई है-

मंगल भवन अमंगल हारी।

ये शुभ का भवन है, अमंगल का विस्फोटक है। यहां राम के बारे में भी 'मंगल भवन अमंगल हारी।' शब्द युज़ हुआ है और 'रामनाम' के बारे में भी यही शब्द का प्रयोग 'मानस' ने किया है। पहले रूप के बारे में किया जो रोज हम पंक्ति गाते है-

मंगल भवन अमंगल हारी।
उमा सहित जेहि जपत पुरारी ।।

तुलसी कहते हैं, रामनाम कलियुग के मेल का नाश करता है और अमृत निकालता है। उद्धारक भी है, विनाशक भी है।

हमारे मंगलदास दुधरेजिया उसने प्रश्न पूछा है कि पोरबंदर से दयारामभाई का फोन आया था। उसने कहा है कि बापू को पूछो कि नामस्मरण या सतत 'श्री हनुमानचालीसा' का पाठ, ये दोनों में से साधक को किसके द्वारा अधिक लाभ होता है, ये जानने की इच्छा है। पहली बात तो ये कि नामस्मरण और 'हनुमानचालीसा' से लाभ हो ये भूल जाओ; ये पहले छोड़ो। यदि हमारा मन चाह करता है तो ये चाहो, शुभ हो। लाभ को छोड़ो। सब से बड़ा लाभ लेकर तो आये हो! 'बड़े भाग मानुष तनु पावा।' इससे बढ़िया लाभ क्या हो सकता है? मेरा बहुत पुराना निवेदन है कि आप हरिनाम लेने लगे वो ही लाभ है। नहीं ले पाये आज तक वो गेरलाभ है।

जिंदगी तुझसे बस यही गिला है मुझ को।
कि तू बड़ी देर से मिला है मुझ को ।

मैं तो अपने ढ़ंग से सोचता हूं। थोड़ा पोझिटिव सोचो तो आप को लगेगा कि आप को बुद्धपुरुष देर से मिला? नहीं; आप की आत्मा कहेगी कि जब जरूरत थी तब ही मिल गया। ये नियम है। वो तत्त्व चुकता नहीं है, साहब! वो तत्त्व प्रतीक्षा करता है कि कहां, कब जरूरत होगी? बुद्धपुरुष के बारे में कभी देर नहीं होती। वो वेइट कर रहा है।

बुद्ध को जब आमंत्रण मिला इस नगरवधू का जहां बड़े-बड़े धनी, सम्राट उसके नृत्य और एक नयन कटाक्ष के लिए कुरबान होते थे। वहां तथागत बुद्ध को निमंत्रण मिला कि आप मेरे रंगमहल में पधारो। बुद्ध ने कहा कि नहीं, इन्कार नहीं करता हूं। तुझे जरूरत होगी तब मैं आ जाऊंगा। आज तो पानी मांगे तो दूध देनेवाले धनी तेरे द्वार खटखटा रहे हैं। आज तेरा जीवन है। लेकिन जरूर होगी तब मैं ही होउंगा।

दर्पन तुम्हें जब डराने लगे, जवानी भी दामन चुराने लगे,
तब तुम मेरे पास आना प्रिये,
मेरा दर खुला है, खुला ही रहेगा, तुम्हारे लिये।

बुद्ध ने कहा, आज तुझे जरूरत नहीं है। खुश रहो। मुझे अच्छा लगता है कि बुद्धत्व पाने के बाद बुद्ध को ऐसी एक नगरवधू के साथ बात करने में कोई संकोच नहीं है; कोई सूग नहीं है; कोई परहेज़ नहीं है। परहेज़ होती तो बुद्धत्व थोड़ा झांखा हो जाता। बातचीत करते हैं विवेक से। उस समय वो नहीं समझ पाई। लेकिन समय तो बीतता था। शरीर जर्जरित हुआ। रोगसदन बन गया शरीर! और किसी कारणवश उसको कुष्ठ रोग हुआ। और मैंने सुना है जरूर और सच्चा सुना है कि देहातों में जब किसी को कुष्ठ रोग होता था तो परिवार लोग उसको समुद्र में फैंक देते थे! बड़ा क्रूर कर्म था ये! लेकिन अच्छा किया सौराष्ट्र की परब की जगह ने, संत देवीदास ने कि जिसके घर में कुष्ठरोगी हो वो मेरे आश्रम में, गुरुद्वार में भेज दो। साहब, इतना बड़ा बुद्धपुरुष, इतना बड़ा पहुंचा हुआ संत देवीदास ये रोगीओं की सेवा करते थे! गांधीजी ने खुद की है। रमण महर्षि स्वयं करते थे। और वो कहते थे, अभागा इन्सान मेरा ईश्वर है। परब के स्थान में ये बहुत सेवा हुई। फिर तो अमर माँ, जुवान व्यक्ति साहब! और जिसका पद मैं अक्सर गाता रहता हूं। 'मैं तो शुद्ध रे जाणी ने तमने सेविया।' 'सिद्ध' नहीं; ये पाठभेद तो मैंने किया है। अमरमाँ की समाधि की क्षमा मांगु। पाठ तो 'सिद्ध' है। अवश्य, मैं सलाम करता हूं इस पाठ को। लेकिन मेरे दिल में बैठता है -

में तो शुद्ध रे जाणीने तमने सेविया।
मारा हृदियामां दिवस ने रात
जीवण भले ने जागिया।

तो, उस महिला को रक्तपित्त का रोग हुआ जो नगर जिसकी पायल की खनक सुनने के लिए जागता रहता था। नगर ने मिलकर उसको नगर निकाला कर दिया। जंगल में छोड़ दिया। जीवन का अध्याय पूरा होनेवाला था। और ये महिला को बहुत तृषा लगती है। और बेचारी अकेली पड़ी वृद्ध महिला 'पानी...पानी...पानी...!' इतने में वृक्ष के पीछे से एक हाथ आया, 'लो, पीओ।' ये महिला का भाग्य तो देखो! बुद्ध ने अपने भिक्षापात्र से पानी पिलाया! 'भगवन् आप?' बोले, 'मैंने तुम्हें कहा था कि जब तुझे जरूरत होगी तब मैं आउंगा।' साहब! जिंदगीभर दूसरी बातों में जीनेवाली ये महिला आख़िरी क्षण में निर्वाण को प्राप्त कर जाती है।

तब तुम मेरे पास आना प्रिये...

लेकिन अधूरा है गीत। वहां तो जिसको जरूरत पड़ी इसको आने को कहा है। अच्छा पक्ष है। लेकिन तथागत कहते हैं, तेरी जरूरत पड़ी तब मैं आउंगा। ये कृपा का सर्वोच्च शिखर है। अरे, तेरे पास आने की समझ होती तो तो जवानी में न आ जाती? अब तो तेरा दायित्व है, तू आ!

द्रौपदी का वस्त्राहरण हुआ 'महाभारत' में तब द्रौपदी कृष्ण को देर से याद करती है। चुक गई वर्ना दु:शासन की ताकत नहीं कि उसकी साड़ी के छोर को पकड़ सके! और वहां विकर्ण की जबान पर कृष्ण आया और कहा कि द्रौपदी, ये राक्षसों की सभा है। आज तू कृष्ण को क्यों याद नहीं करती है? हम भूल जायेंगे तो कृष्ण किसी के थ्रू याद दिला देगा कि तेरा जप छूटा जा रहा है! और याद दिलानेवाला शत्रुपक्ष का होगा, मित्रपक्ष का नहीं। भरोसा होगा तो साहब-

मारो हाथ झालीने लई जशे,
मुझ शत्रुओ ज स्वजन सुधी।
-गनी दहींवाला

भरोसा रखना मेरे श्रावक भाई-बहन कि हम कृष्णनाम चुक जायेंगे, परिस्थिति ऐसी हो; दु:शासनों के हाथ फैले हो। सब अपना दायित्व चुके जा रहे थे। अल्लाह करे विश्व में कभी ऐसी घटना न घटे। और मुझे तो लगता है कि नौसो निन्यानब्बे साड़ी कृष्ण ने क्यों पहनाई? एक साड़ी काफ़ी थी समय पर। लेकिन कृष्ण ने एक साड़ी दी, बाकी की साड़ी द्रौपदी छोड़ती जाना भारत में कि किसी बेटी की साड़ी कोई खिंचे तो ये साड़ी काम आयेगी। ये साडियां अभी भी जमा है। कभी बुद्धपुरुषों की वाणी का ये वस्त्र है। कभी सद्गुरु की वृत्तिओं का ये वस्त्र हमें ढ़ांके हुए है। हमें अनावरण होते बचाता है। और 'रामायण' भी गवाह है कि हनुमानजी को मृत्युदंड का एलान हो चुका था। रावण ने कहा, इसको मृत्युंदंड दे दो। शत्रु का भाई आया और उसने कहा, नीति मना करती है। दुश्मन मदद करेंगे। भरोसा होना चाहिए। कौन इज्जत बचाता है? योग्य समय पर कौन इज्जत बचाता है? हरिनाम...हरिनाम...हरिनाम। समय पर कौन आयेगा? बुद्ध आयेगा। बुद्ध ने जीवनपर्यन्त जो पात्र का उपयोग किया है उसी पात्र के जल से उसको पान कराया!

तो, हमारी चर्चा चल रही है कि लाभ के लिए कुछ मत करो। क्योंकि लाभ के लिए करने से शायद लाभ न भी हो तो निराशा होगी। शुभ जरूर होगा। हम संसारी है, लाभ चाहे, लेकिन शुभ की छांया में लाभ चाहो, बस। तो, 'हनुमानचालीसा' हो कि नामस्मरण हो, लाभ की बात पहले छोड़ दो। और दूसरी बात ये है कि सहज जो हो, रसायन ही है। रामनाम चले, चलने दो। कृष्णनाम चले, चलने दो। चौपाईयां गुनगुनाये, चलने

दो। कोई भी शायरी, कोई भी गीत, तराना, कोई भी पद्य, कोई चलचित्र का गीत, श्लोक, कोई भी जो सहज हो। और ऐसा होता है साहब, ऐसा होता है। आप खूब हरि स्मरण करेंगे तो अचानक और बातें आने लगेगी। उसको बाधा मत समझो। तुम ऐसे जप रहे हो ना तो हर आध्यात्मिक्ता को तुम्हारे पास आने की इच्छा हो रही है। नाम को लगे, मैं जाउं? 'हनुमानचालीसा' को लगे, मैं जाउं? हां, उस समय सब का आदर करो, जो आये। सिद्धांतवालों ने भरमाया है, स्वभाववालों ने मुक्त कर दिया है।

मैंने नेटवर्क बनाया है? मैंने कभी रिहर्सल किया है कि 'रामचरित मानस' गाते-गाते फिलम का गीत भी गा लूं? मेरा कोई प्रयास नहीं है। आ जाता है तो मैं क्या करूं? हे उपरवाला, तू भी सुन! तू भी डोलेगा! ये सहज है तो मैं करता हूं। असहजता मृत्यु है, सहजता जिंदगी है। आप ने पढ़ा है? पौराणिक कथाओं में कथा कैसे सुननी चाहिए ऐसे नियम बताये गए हैं। उपवास करके सुनो। पवित्र वस्त्र धारण करे सुनो। मौन रखकर सुनो। कथा पूरी हो तब ब्राह्मणों को-साधु को दक्षिणा दो। ये सब नियम लगाये हैं। मेरी कथा ने सब विधान तोड़ा। तोड़ा मिन्स? छूट गये। कैसे भी सुनो। एक समय तो ऐसा था कि सिद्धांतवादी कहते थे, युवानों को कथा क्या सुनना? अभी उम्र नहीं पकी है; काम करो। मैं ऊलटा कर रहा हूं! युवानों को सुनने दो। वो तुम्हारी अच्छी सेवा करेगा कथा सुनने के बाद। राहत इंदौरी साहब ने कुछ शे'र पेश किए है-

ऊंगलियां यूं न सब पर उठाया करो ।
खर्च करने से पहले कमाया करो ।

'फल्लां ऐसा...', 'फल्लां ऐसा...!' ये तो ये है। ऐसे ऊंगलियां यूं न सब पर उठाया करो। पहले बंदगी करो, थोड़ी साधना करो, फिर 'ये वैसा है, ऐसा कुछ बोलने की जरूरत ही नहीं रहेगी। नाम छुड़वा देगा। बहुत अच्छा शे'र है-

शाम के बाद जब तुम सहर देख लो,
कुछ फ़कीरों को खाना खिलाया करो।

शाम तो देखी, रात हो गई, सो गये। पता नहीं कि सुबह हो, न हो! लेकिन परमात्मा करे कि शाम हुई, तुम सो गये, फिर परमात्मा ने जगा दिये। एक-दो दिन और मिल गये तो क्या करना? राहतसाहब सलाह देते हैं कि शाम के बाद जब तुम सहर देख लो, कुछ फ़कीरों को खाना खिलाया करो। फ़कीर तो बहाना है। कुछ जरूरतमंद की सेवा किया करो। यदि जीवन में सुबह हो गई तो।

आख़िर में कल की एक जिज्ञासा जो मैंने रख ली थी। उसमें 'महाभारत' के संदर्भ में एक जिज्ञासा की गई थी कि 'बापू, स्वर्गारोहण के समय द्रौपदी पहले क्यों गिरी?' निर्णय देना मुश्किल है साहब! बड़ा विचित्र है। पहले द्रौपदी, फिर सहदेव, फिर नकुल, फिर भीम, फिर अर्जुन, आख़िर में धर्म गिरता है। और साथ में वो कुत्ता है। अब, व्यास का विचार है इसीलिए इधर-उधर तो कोई नहीं कर सकता। लेकिन व्यासपीठ पर बैठा हूं तो एक साधु के नाते मैं अर्थ बदलूंगा। वहां दलील क्या दी गई है कि द्रौपदी में पक्षपात था कि पांच पांडवों में अर्जुन के प्रति उसका विशेष लगाव था इसीलिए वो पहले गिरी। भगवान व्यास कहे तो तो फिर दादा, कुबूल! लेकिन बूढ़े बाबा, मेरी भी सुन। द्रौपदी पहले गई, इसका ऐसा अर्थ क्यों किया जाय कि उसमें पक्षपात था! द्रौपदी का क्या कुसूर? मुझे तो इतना कहना है कि बलिदान का अवसर आता है तो पहले देश की महिला ही बलिदान करती है। चाहे अग्नि से प्रगट होना है कि हिमालय में डूबना है। दोनों जगह नारी ही आगे चलती है। ये नारीगौरव की महिमा है। मैं उसका ऐसा अर्थ समझता हूं। मैं उसका मेरी जिम्मेवारी के साथ यही अर्थ करूंगा कि बलिदान पहले नारी ही देती है। और कोई भी नारी चाहेगी कि मेरे सामने ये कोई न मरे। आज भी। इसीलिए भारत की सुहागन नारी अखंड सुहागन का आशीर्वाद सदैव चाहती है। इसका अर्थ है, ये पहले मरने की मांग है कि पहले मैं मरूं।

मानस-हनुमानचालीसा :: १ ::

सदा दास होना एक बहुत बड़ी उपलब्धि है

बाप! नव दिवसीय इस रामकथा जो 'मानस हनुमान चालीसा' के नाम से रखी गई। आज आख़िरी दिन इस कथा का उसमें हम प्रवेश करें इससे पूर्व सभी को मेरा प्रणाम। जो कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा चल रही है उसमें इस कथा के उपसंहारक रूप में आगे बढ़ें। फिर एक बार स्मरण करे कि इस 'हनुमानचालीसा' को पढ़ेगा उसको शुद्धि प्राप्त होगी अथवा तो आदमी सिद्ध हो जायेगा। सिद्ध का एक अर्थ हे कृतकृत्य। सिद्ध का एक अर्थ है अब करने का कुछ नहीं बचा। और मेरे भाई-बहन, जीवन में किसी साधक को कृतकृत्य सिद्धि आ जाये तो भी कृपा का अनुभव कर लेना चाहिए। बिना कृपा महसूस किये यदि कृतकृत्यता आ भी गई तो आदमी मुक्त तो हो जायेगा; लेकिन एक बहुत बड़े रस से वंचित रह जायेगा। रमण महर्षि का एक वाक्य, एक सूत्र इस बात को बल देता है। भगवान रमण कहते हैं, 'हे अरुणाचलम्, हे शिव; मुझे ज्ञान हो जाय और मैं मेरी समग्र कर्म-अकर्म-विकर्म जो कर्म की व्याख्यायें है, ये सब जल जाय इससे पहले तेरी कृपा का अनुभव करा देना।'

तो, सिद्ध होना मानी कृतकृत्य होना। ये 'हनुमानचालीसा' से हो सकता है। एक बादल को आप देखो आकाश में यानी वर्षाकालीन मेघ के बादल को आप देखो और देहातों में रहनेवाले तो कोई लोग तुरंत कह देते हैं कि सजल बादल है। कहीं न कहीं बरसेगा। बादल में जलसंचय कितना है वो कह नहीं पाते। बहुत जल भरा है। लेकिन अंदाज़ नहीं होता। किसी बुद्धपुरुष की कृपा असीम होती है, लेकिन अंदाज़ नहीं होता। अब अंदाज़ करने का कौन-सा

तरीका? क्या करे कि हम महसूस करे? अपार कृपा होने के बाद भी होना तो यही चाहिए कि ये बरसेगा तब हम कितना उसको झेल पाये, झिल पाये! और हम इस कृपावर्षा को इतनी मात्रा में ही पकड़ पाते हैं, जैसा हमारा पात्र। कहीं सरवर छलक जाते हैं, कहीं नदियां उमड़-उमड़कर बहती है। अनराधार कृपा बुद्धपुरुष की हम पर होती है, परमात्मा की होती है, उसी समय। और मैंने जो किसान का दृष्टांत दिया तो, भक्ति में कृपा में, हरिनाम में 'हनुमानचालीसा' में कितनी सिद्धियां है, कितनी शुद्धियां है ये हम अंदाज़ा नहीं कर पायेंगे। कोई किसान चाहिए कि जो पक्का करे कि बरसनेवाला है। और फिर किसीको संकेत करे कि पात्र ठीक कर ले। जितना बड़ा रख सके, रख ले। यहां जो किसान है वो ही बुद्धपुरुष है। कृपा के बादल की जलराशि का संदेश बुद्धपुरुष देता है। तो मेरे भाई-बहन, सिद्ध होना, कृतकृत्य होना एक अर्थ में।

जो यह पढ़े हनुमान चालीसा।
होय सिद्धि साखी गौरीसा ।।

तो ये दो पंक्ति के आधार पर ये चर्चा चल रही है, उनमें जिस पंक्ति पर हम ज्यादा टिक गये-

राम रसायन तुम्हरें पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।

आप के पास राम-रसायन है। अब, हमारे पास क्यों नहीं? हमें हनुमानजी से क्यों लेना पड़े? चलो, हनुमानजी गुरु है, माना। राम-रसायन हम अपने आप क्यों नहीं बना देते हैं? हम पढ़े-लिखे हैं। अेम.डी. हो गये हैं। बहुत बड़े स्पेशियालिस्ट हो गये हैं। कोई वक्ता के रूप में, कोई ज्ञानी के रूप में, कोई ख़बर नहीं क्या-क्या रूप में हो गये हैं? लेकिन दवा नहीं बना पाते हैं! तो राम-रसायन हमें किसी के पास लेने जाना क्यों पड़े? हम ही वैद्य हो जायें, हम ही दवाएं बना लें। हम ही अपना इलाज कर लें। खुद बनाये, खुद पीए। राम-रसायन हम क्यों नहीं प्राप्त कर सकते स्वयं? और हनुमानजी के पास है तो हम उससे पायें। लेकिन हनुमानजी की तरह अल्लाह करे हमारे पास भी आये ये राम-रसायन। तो, आ सकता है। हम डायरेक्ट ले सकते हैं। हम बना सकते हैं। लोग दारू बना सकते हैं तो दवा नहीं बना सकते? तो, कर सकते हैं, अवश्य। लेकिन वहां आधी पंक्ति में एक शर्त आई है-

सदा रहो रघुपति के दासा ।

राम-रसायन उसके पास रहेगा और उसके पास से हमें प्राप्त होगा जो रघुपति का दास होगा। रघुपति के दास तो हम सब हैं। लेकिन बहुत महत्त्व का यहां शब्द है 'सदा।' जो सदा दास होगा वो राम-रसायन का मालिक होगा। हमारी और आप की स्थिति ये है, हम दास तो है, हम किंकर है, हम सेवक है, सदा नहीं होते हैं! सदा दास होना एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। तुलसीदासजी 'सदा' शब्द का बहुत प्रयोग करते हैं। 'मोमेन्ट सायन्स' मैं जिसको कहता हूं। ये पल विज्ञान जो है। ये क्षणों को समझ लेने का विज्ञान है।

वक्त की कैद में जिंदगी बंद है।
ये चंद लम्हें ही तो है जो आजाद है।

भगवान की कथा का सत्संग हमने किया अब आज पूरा हो जायेगा। लेकिन फिर सदा ये सत्संग का अनुसन्धान बनाने के लिए क्या करें? ये सदा कैसे हो? 'दास' और 'सदा' दोनों शब्द बिलग है, लेकिन 'दास' यदि सदा नहीं होगा तो 'दास' नहीं है। और 'सदा' मानी निरंतरता। ऊर्दू में तो सदा मानी आवाज़, पुकार। पुकार भी दासभाव से नहीं होगी, प्रपन्नभाव से नहीं होगी तो ठीक नहीं। पुकार तो अभिमानी भी करता है! चिल्लाता तो वो भी है! और चीख तो भक्त भी मारता है! आप ने कभी देखा है, बहुत गुस्सा करनेवाले की आंख में भी आंसू आ जाते हैं। और परमात्मा के लिए करुणा की मांग करनेवाले की आंख में भी आंसू आ जाते हैं।

तो, 'दास' और 'सदा' बहुत प्यारे शब्द है। 'सदा' का उल्टा कर दो, 'दास'। दास का उल्टा कर दो, 'सदा'। अब 'सदा दास' कैसे बने? और एक बस्तु समझ लो, मालिक बनने से बहुत अच्छा है दास बनना। दास वो है जो उदास नहीं है। शेठ उदास हो सकता है, क्योंकि नफ़ा हुआ, घाटा हुआ! रेड पड़ी! ये हुआ! जांच हुई! ये...ये! मालिक को उदास होना आता है। दास को कोई लेना-देना नहीं। बहुत फायदामंद है दास होना। हमारे यहां साधुओं में नाम के पीछे 'दास' भी लगता है और 'राम' भी लगता है। जैसे कि 'संतदास' भी कहो और 'संतराम' भी कहो। क्या मतलब? जो सदा दास होता है वो कभी न कभी राम भी बन जाता है, वो राम तक पहुंच जाता है। लोग उसको रामरूप मानते हैं।

तो, हम किसीके शरण में प्रपन्न तो हैं, कायम नहीं है। बहुधा हमारी प्रपन्नता ऐसी होती है कि जब तक हमारी इच्छा को सन्मान मिले, जब तक हमारी आशा की पूर्ति हो, हम तुम्हारी शरण में है। हमारी इच्छा को सन्मान न मिला, हमारी आशा पूर्ति नहीं हुई तो फिर ठीक नहीं है! क्षणभंगुर, कामचलाउ, बिकाउ दासत्व जब तक सदा नहीं बनता है ये टिकाउ नहीं है। सदा बन जाये उसके पास राम-रसायन कायम निवास करता है। वो हनुमानजी जैसे बांट सकता है वैसे ऐसी भूमिका पर पहुंचा कोई बुद्धपुरुष भी राम-रसायन बांट सकता है, जो सदा दास हो गया। तो, 'करहु सदा सत्संग।' ऐसा तुलसी कहते हैं। 'सदा' बहुत प्यारा शब्द है। सदा, निरंतरता, तैलधारावत्। शंकर भगवान तो ब्रह्म है, परमात्मा है; शिव है, ईश्वर है। क्या नहीं है? लेकिन रामजी के रामदरबार में राज्याभिषेक के बाद जब आये, स्तुति की और जाते समय क्या बोले?

बार बार बर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग ।
पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग ।।

हम को दो लेकिन सत्संग की बात आई तो 'सदा सतसंग।' और 'भागवत' में 'सदा सेव्या', 'सदा सेव्या'। 'सदा' शब्द बहुत महत्त्व का है। अब प्रश्न ये है कि सदा दास कैसे हो पाये?

मेरे भाई-बहन, भक्ति के दो शास्त्रीय विभाग है। एक भक्ति का नाम है वैधि भक्ति। और दूसरी भक्ति का नाम है रागानुगा। ये शास्त्रीय नाम है। याद रखियेगा, हमारे जीवन में वैधि भक्ति है। इसीलिए हम दास है, सदा नहीं है। दास अवश्य है। भक्ति करनेवाला दास ही तो होगा। किसीके चरण पखालो तो जिसके पखाले जाय वो स्वामी है, पखालन करनेवाला दास है। ईश्वर, परमात्मा, मूर्ति, कोई संत-साधु तो श्रेष्ठ है, हमने कुबूल कर लिया और हम उसकी पूजा कर रहे हैं। हम उसके आगे किंकर है। वैधि भक्ति करनेवाला दास होता है, सदा नहीं होता। सदा दास होने के लिए रागानुगा भक्ति में पहुंचना पड़ता है। और रागानुगा भक्ति है रसायन।

कल एक बात पूछी गई कि काम-रसायन विस्फोटक है कि उद्धारक है? ये बस्ती बढ़ रही है जो काम रसायन के कारण उसी संदर्भ में पूछा गया कि कामना-भोगों की इतनी वृद्धि है कि आबादी बढ़ती जा रही है, विस्फोट हो रहा है। काम-रसायन से विस्फोट नहीं होता है, काम-वासना से विस्फोट होता है। यहां मेरे लिस्ट में जो पांच रसायन की बात मैंने रखी उसमें काम को वासना नहीं कहा है, काम-रसायन है।

तो मेरे भाई-बहन, वैधि भक्ति जब तक रागानुगा नहीं बनती तब तक वो रसायन का दर्जा नहीं पाती है। वैधि भक्ति का मतलब है क्रमशः भक्ति। आप किसीकी पूजा करो तो ये भक्ति है, ज्ञान नहीं है। हमारे नारद और वैश्नवों के जितने ग्रंथ है खास करके वैधि भक्तिपरक और उसमें भक्ति की कुछ क्रमशः वो विधा बतायी है। और पूजा के चौसठ प्रकार भी वैश्नवी ग्रंथों में बतायें है। ये सब वैधि भक्ति है कि स्नान करो, शुद्ध कपड़ें पहनो, आसन बिछाओ, एक प्रकार के आसन पर बैठो, मूर्ति को गंधद्रव्य का लेपन करो। फिर चंदन करो, फिर बिंदी करो। मैं तो हनुमानजी को भी बिंदी कराता हूं। लोग कहे, हनुमानजी निम्बार्की है? मेरा हनुमान निम्बार्क है। तुम्हारा जो हो, तुम जानो! सब का अपना-अपना हनुमान होता है। विनोबाजी को जब ईसाई पादरी ने कहा कि तुम्हारा कृष्ण तो व्यभिचारी है। तो विनोबाजी को लगा कि मैं उसको जवाब दूं। लेकिन

उसने सोचा कि नहीं बहस क्यों करे? इनका कृष्ण व्यभिचारी होगा, मेरा कृष्ण रासबिहार है। कौन झंझट करे यार! बुद्धपुरुष तकरार नहीं करता। अपने-अपने नज़रियें से गोविंद को देखा तो उसका बेचारे का कुसूर क्या? मुझे क्यों उसके निवेदन पर कृष्ण की पहचान प्राप्त करनी? मेरा अपना कृष्ण हो सकता है।

तो, चंदन करो, अक्षत लगाओ, धूप करो, आरती करो, पुष्पांजलि करो, फिर भोग लगाओ, फिर दंडवत् करो, क्षमायाचना करो। ये हो गई वैधि भक्ति। एक घंटे के लिए वैधि भक्ति दास तो बना देती है लेकिन सदा दास नहीं बना पायेगी। मैंने तो वैधि भक्ति सब बंद करवा दी। वर्ना तो क्या-क्या होता था पोथी पर! एक दो बस्तु रखी कि पोथी खोलूं, आप आये, फूल चढ़ाये और आखिर में आरती। मुझे अच्छा लगता है इसीलिए आरती रखी है। कई लोग, मैं मूढ तो न कह सकूं, लेकिन गूढ...! जो हो, वो ऐसा आज भी मानते हैं कि बापू ने सब बिधि निकलवा दी लेकिन खुद की आरती करवाते हैं! यार, अल्लाह तुझे सलामत रखे! ये मेरी आरती है? अरे, गूढ लोगों! शंकराचार्य मूढ कह सकते हैं! मैं नहीं कह सकता। लेकिन हे गूढमते! कई लोग तो कहते हैं, व्यासपीठ पर 'रामायण' रखने की जरूरत क्या है? बापू खड़े-खड़े बोलते हैं, तो ऐसे नहीं बोलते? एक आदमी ने तो कहा कि ओशो रजनीश की तरह सोफे पर बैठकर नहीं बोल सकते? अरे, ओशो की अपनी अदा है, मोरारिबापू की अपनी अदा है! सबको जोड़ते क्यों हो? मैं स्वीकार्य हूं, 'मानस' स्वीकार्य नहीं है! ये क्या है? मोरारिबापू आये, उद्घाटन कर दे, अच्छा है। लेकिन कथा में नहीं जायेंगे! मेरी मान्यता 'मानस' के कारण है। और उसको आप न स्वीकार करो तो मैं तो कोई काम का नहीं हूं! लेकिन मूढ लोग ऐसा करते हैं! मुझे हंसी आती है कि मेरी आरती ऊतर रही है! लेकिन खेर! तो आरती मुझे अच्छी लगती है तो मैं आरती कराता हूं। और वो 'रामायणजी' की है। 'आरती श्री रामायणजी की' है, मेरी थोड़ी है? मैं यहां बैठा हूं तो फिर क्या करूं?

कहने का अभिप्राय यही है, धीरे-धीरे व्यासपीठ ने बहुत वैधिक पूजा को सविनय हटाया है, सादर हटाया है, क्योंकि मैं और आप धीरे-धीरे रागानुगा भक्ति तरफ जाये ताकि कुछ समय के लिए बने दास हम सदा दास हो जाये। कायम के किंकर हो जाये। कायम के प्रपन्न हो जाय। प्रपत्ति हो जाये। अब 'मानस' से इसका एक बहुत बड़ा प्रमाण मैं आपके सामने रखना चाहता हूं।

एक मंदिर है। मंदिर में मूर्ति है। लोग पूजारी नियुक्त करते हैं। पूजारी का काम है विधिवत् पूजा करना, कराना। जनकराजा की पुष्पवाटिका में गिरिजाघर है, गिरिजामंदिर है। श्री जानकीजी अष्टसखियों के साथ पार्वतीपूजा के लिए आती है। उसने वैधि भक्ति की। पूजा जरूर की, लेकिन जितना जरूरी नहीं ये सब हटा दिया। इसने क्या किया? स्नान किया। स्नान करके मंदिर में जाना ये बताया लेकिन साथ में एक सूत्र जोड़ा कि स्नान करके मंदिर में जाओ; स्नान करने से तन मुदित होता है। और मंदिर जाओ तो तुलसी कहते हैं, मन मुदित होकर जाना। अब देखो, पूजा तो कर रही है पर सीधी रागानुगा भक्ति तक पहुंचती है।

पूजा किन्ही अधिक अनुरागा।

चरण धोना, चंदन करना, अक्षत लगाना, माला पहनाना, आरती कराना, कोई विधि नहीं है यहां। पूजा कर ली। मुदित मन से आई है। दिल दे दिया माँ के चरण में। सीधी रागानुगा में पहुंचती है माताजी। उनको रामकिंकरी होना है। उनको राम को सदा-सदा पाना है। लेकिन हम जिव है, माताजी को तो क्या करना था, क्या मांगना था? लेकिन हमें सिखाने के लिए कि वैधि भक्ति में शुरूआत में कोई इच्छा हो तो थोड़ा मांग भी लेना परमात्मा से। ये जो परमतत्त्व है ना, हमारी कितनी खेवना करते हैं! जीव है, कुछ मांगना है तो मांग भी लो। लेकिन क्या मांगो?

निज अनुरूप सुभग बर मांगा।

हे माँ, मैं तो कुछ भी मांग लेती, नादान जो ठहरी! मेरे अनुरूप वरदान देना। मेरे पात्र को देखना। मेरी औकात को देखना। और तू मुझे जो दो वो सुभग होना चाहिए। सुभग का एक अर्थ होता है सुंदर होना चाहिए, शुभ होना चाहिए। अपने अनुरूप वरदान मांगा। लेकिन ऐसी मेरी औकात के अनुसार देना। ये जब आती है न बात तब एक घटना घटती है। और वो घटना है अचानक एक सखी का आना। अचानक किसी गुरु का आना। अचानक किसी बुद्धपुरुष का आना। और वो वैधि भक्ति छुड़ा देती है। जानकी, छोड़ मंदिर! मूरत छोड़! विधिविधान छोड़! जिसकी मांग कर रही है वो तो बाग में घूम रहा है। पूरे संसार में समाया हुआ है! लता, पता, तरु, कानन, बहती नदियां, चमकती बीजली, रोम-रोम, रेंजा-रेंजा, टुकड़ें-टुकड़ें में समाया हुआ है। तू यहां चार दीवार में ही उसको क्यों पकड़ रही है? चार दीवार के बीच पूजा होती है, साक्षात्कार तो पूरे खलक में होता है। केवल पूजा करनी है? चार दीवारों में बैठो, लेकिन जिसकी पूजा कर रहे हैं उसको पूरा का पूरा पाना है तो -

मंदिर तारुं विश्वरूपाळुं सुंदर सरजनहारा रे,
पळपळ तारा दरशन थाये, देखे देखनहारा रे।

ये सूरज, ये चांद, ये हवायें, ये पक्षी की चहचहाट, ये परमात्मा की बिलग-बिलग हर अदायें है। ये सभी नज़ारे, सभी मंज़र उसके है। इसमें मंदिर की उपेक्षा नहीं है। लेकिन संकीर्णता से व्यापकता की यात्रा है!

जानकी को लिये चलती है वो सखी वैधि भक्ति से रागानुगा भक्ति की ओर। और फिर परस्पर अनुराग की सृष्टि होती है। लेकिन पूर्णत: अनुरागवाली रागानुगा भक्ति तो तब सिद्ध हुई। धनुषभंग हो गया। राम-जानकी मिले। सीयाजू ने माला पहनाई। बारात लेकर महाराज पधारे। विधिवत् शादी हुई उसके बाद कोहबर की लीला होती है। जहां चार दुल्हों के सिवा कोई पुरुष नहीं है। सब सखियां है। ये कोहबर है रागानुगा भक्ति का अंतिम चरण। जहां पुरुष नहीं है। ज्ञान पुरुष है। वहां वैराग नहीं जा सकता। वैराग पुरुष है। वहां त्यागानंद नहीं जा सकता। कोहबर की लीला है, वहां सब महिलायें है। भावजगत है। प्रीत ही प्रीत है। और फिर जानकीजी एक बार राम को विवाहमंडप के मणिस्तंभों में देख चुकी है। लेकिन कोहबर की लीला बिलकुल अंतरंग लीला बन जाती है। तब जानकीजी फिर मणि में राम को देखती है, लेकिन अपने कंगन की मणि में देखती है। परमात्मा तो व्यापक है, लेकिन रागानुगा भक्ति परमात्मा को निज बना देती है, अपना बना देती है।

मेरी मूलत: बात ये है कि हम दास है वैधि भक्ति में। हम सदा दास बन सकते हैं रागानुगा भक्ति में। उसके बाद जानकी सदा-सदा राम की किंकरी बन चुकी है। फिर बन हो, भवन हो कहीं भी हो। जानकी निरंतर रामदासी हो चुकी है। राम की किंकरी बन चुकी है। तो सदा और दास ये अरस-परस है। दास उसको ही कहे जो सदा हो। और ये रागानुगा भक्ति जो सदा निरंतर दासत्व प्रदान करती है तब ये रागानुगा भक्ति रसायण का रूप धारण कर लेती है।

कथा के क्रम में 'अयोध्याकांड' में भगवान राम-लक्ष्मण-जानकी का वनवास होता है। सुख के बाद दु:ख, दु:ख के बाद सुख ये क्रम है। ये चक्र चलता रहता है। तो प्रभु का वनवास हुआ। भगवान चित्रकूट में स्थिर हुए। दशरथजी ने रामवियोग में प्राणत्याग किया। श्री भरतजी आये। पितृक्रिया की। और पूरी अवध को लेकर राम के शरण में चित्रकूट जाते हैं। बहुत बड़ी राजनैतिक-आध्यात्मिक चर्चायें होती हैं। आख़िर में निर्णय हुआ कि भरतलालजी पादुका लेकर लौटते हैं। पद नहीं पादुका; सत्ता नहीं सत्। बहुत बड़ा विचार यहां रखा गया। श्री भरतजी भी राम की तरह उदासीन व्रत लेकर नंदिग्राम के गड़े में बैठ जाते हैं।

'अयोध्याकांड' के बाद 'अरण्यकांड' का आरंभ परमात्मा की एक सुंदर लीला से होता है।

एक बार चुनि कुसुम सुहाए।
निज कर भूषन राम बनाए ।।

जानकीजी को शृंगार किया। कोई मर्यादा नहीं टूटती। नितांत एकांत में, परस्पर प्रीत का प्रवाह बह रहा था।

प्रभु लक्ष्मण और जानकी सहित अत्रि के आश्रम में आते हैं। अत्रि ने स्तुति की।

नमामि भक्त वत्सलं । कृपालु शील कोमलं ।

जानकीजी ने माँ अनसूया का दर्शन और आशीर्वाद प्राप्त किया। उसके बाद प्रभु सरभंग, सुतीक्ष्ण, कुंभज ऋषि आदि को मिलते-मिलते कुंभज के मार्गदर्शन पर गोदावरी के तट पर जटायु से मैत्री कर के पंचवटी में निवास करने लगे। लक्ष्मणजी ने पंचवटी में समय पाकर प्रभु को पांच आध्यात्मिक प्रश्न पूछे। भगवान ने उसके उत्तर दिये। फिर सीता अपहरण हुआ। अशोकवृक्ष के नीचे अशोकवाटिका में जानकी को रख दिया। यहां सीता के वियोग में भगवान जानकी की खोज करते-करते जटायु को पितृसन्मान देकर, कबंध का उद्धार करके शबरी के आश्रम में आये। नवधा भक्ति की चर्चा की। और शबरी योगाग्नि में अपने को विलीन करके जहां से कभी लौटना न पड़े ऐसे स्थान में चली गई। और भगवान पंपा सरोवर आये। नारद से भेंट हुई। संत के लक्षणों की चर्चा हुई।

'अरण्य' के बाद किष्किन्धा' का आरंभ होता है वहां हनुमानजी के द्वारा राम और सुग्रीव में मैत्री होती है। बालि को निर्वाणपद दिया। अंगद को युवराजपद। प्रभु ने प्रवर्षण पर्वत पर चातुर्मास किया। जानकी की खोज का अभियान चला। अंगद को नायक और जामवंत को मार्गदर्शक बनाकर उस टुकड़ी को दक्षिण में भेज दिया गया जानकी की खोज के लिए। अंत में हनुमानजी ने राम को प्रणाम किया। राम ने मुद्रिका दी, मानो राम-रसायन दिया। तब से ये 'राम रसायन तुम्हरे पासा।' उसके पास आ गया। संपाति ने मार्गदर्शन किया कि लंका में जानकी है। आख़िर में श्री हनुमानजी महाराज माँ जानकी की खोज के लिए निकलते हैं और 'सुन्दरकांड' का आरंभ होता है।

श्री हनुमानजी महाराज समंदर नांघते हैं। पूरी लंका मे खोज करते हैं। कहीं जानकी न देखी गई। एक भवन में वो जाते हैं। विभीषण और हनुमानजी की मुलाकात। हनुमानजी ने मार्गदर्शन मांगा। जुगति बताई। माँ और बेटे की मुलाकात हुई। आशीर्वाद की वर्षा हुई। श्री हनुमानजी कृतकृत्य हुए कृपा के अनुभव के बाद। उसके बाद फल खायें, तरु तोड़े। इन्द्रजित बांधकर लंका की राज्यसभा में ले गया। आख़िर में हनुमानजी की पूंछ जलाई। पूरी लंका जली! सागर में स्नान करके माँ से चूडामणि प्राप्त करके हनुमानजी लौट आये। सब प्रभु की शरण में गये। जामवंतजी ने रामजी को श्रोता बनाकर हनुमंत-चरित्र की कथा सुनाई। यहां रावण की सभा में चर्चा हुई। विभीषण को देशनिकाला दिया। विभीषण राम की शरण में आया। प्रभु ने शरणागत को रख लिया। सेतुबंध का प्रस्ताव कुबूल किया गया।

'लंकाकांड' के आरंभ में परम पुरुषार्थ पर रही परम कारुणिक की कृपा का प्रत्यक्ष प्रमाण था सेतुबंध। उत्तम धरणी देखकर भगवान रामभद्र के मन में मनोरथ हुआ है कि यहां शिव की स्थापना करूं। और महादेव की स्थापना की। भगवान रामेश्वर की विधिवत् पूजा हुई। लंका पहुंचे। सुबेल पर ड़ेरा। दूसरे दिन राज्यसभा में राजदूत के रूप में अंगद को भेजा गया। मंत्रणा विफल। युद्ध अनिवार्य। भीषण संघर्ष होता है। आख़िर में ईकतीसवें बाण से रावण की नाभि में जो राम-रसायन था, उस कुंभ को तोड़ा गया। रावण का तेज प्रभु के चेहरे में समा गया। मंदोदरी आई, प्रभु की स्तुति की। रावण का संस्कार हुआ। विभीषण को राजतिलक हुआ।

ठाकुर और माँ जानकी का मिलन हुआ। उसके बाद प्रभु पुष्पक विमान में बैठकर निज सखाओं को लेकर निकलते हैं। हनुमानजी को कह दिया गया कि तू अयोध्या जाकर भरत को ख़बर दे। यहां प्रभु ने विमान से सेतुबंध भगवान का दर्शन किया। ऋषि-मुनिओं को मिलते हुए प्रभु गंगा के तट पर नीचे उतरे। वो केवट, वो निषाद, वो दीन-हीन समाज को फिर प्रभु ने चौदह साल के बाद सब को बुलाये। गुह को भी साथ में लिया।

'लंका' के बाद 'उत्तरकांड' का आरंभ होता है। सकुशल राघवेन्द्र आ रहे हैं, इस ख़बर के समान भरत के लिए और कौन ख़बर हो सकती है? पुष्पक विमान अयोध्या के सरजू के पटांगण में उतरता है। निज सखाओं के साथ प्रभु सजानकी, सलक्ष्मण विमान से उतरे। सब को धन्य-धन्य कर दिया! प्रभु निज भवन की ओर जा रहे हैं। माँ कैकेयी को पहले मिले। माताओं से मिले। पूरी अयोध्या आनंद में डूबी है। और गुरुदेव ने दिव्य सिंहासन मांगा। रामराज्य का सिंहासन भव्य नहीं था, दिव्य सिंहासन था। भव्य सिंहासन पर सत्ता होती है, दिव्य पर सत् बैठता है। और रामजी सिंहासन के पास नहीं गये, सिंहासन उनके पास आया; सत्ता इनके शरण में आई। सिंहासन पर विराजमान हुए। जानकीजी विराजमान हुई। और त्रिभुवन को रामराज्य प्रदान करते हुए भगवान वशिष्ठजी ने राम के विशाल भाल प्रदेश में रामराज्य का तिलक किया। और दिव्य रामराज्य की स्थापना हुई। समय बीतता चला। सब मित्रों को बिदा दे दी गई। श्री हनुमानजी पुन्यपुंज है इसीलिए निरंतर राम के पास रहे।

राम की ललित नरलीला के कारण जानकीजी ने दो पुत्रों को जन्म दिया। रघुवंश के वारीश का नाम दिखाते हुए तुलसी ने कथा को समाप्त कर दी। जानकी का दूसरी बार का त्याग आदि-आदि विवाद जिसमें है उसको तुलसी ने लिखा नहीं है। तुलसी संवाद करना चाहते हैं। फिर जो कथा आती है वो तो कागभुशुंडि और गरुड़ के बीच के संवाद की कथा है। कागभुशुंडि ने ज्ञान और भक्ति की चर्चा की। आख़िर में सात प्रश्न पूछे गये। सात प्रश्नों का प्रत्युत्तर दिया। भुशुंडि ने कथा को विराम दिया। याज्ञवल्क्य महाराज ने भरद्वाजजी के सामने विराम लिया होगा। शिव ने कथा को विराम दिया। और कलिपावनावतार तुलसीदासजी अपने मन को श्रोता बनाकर जो कथा सुनाते थे, उसने विराम देते समय पूरे 'रामचरित मानस' का एक सूत्रात्मक निचौड़ वो चौपाईओं में रख दिया-

एहिं कलिकाल न साधन दूजा ।
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा ।।
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि ।
संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि ।।

इस कलिकाल में ओर कोई साधन हम जैसों के लिए दूसरा नहीं है। न हम योग कर पायेंगे, न जप कर पायेंगे, न व्रत कर पायेंगे, न पूजा कर पायेंगे। निचौड़ क्या है पूरी कथा का? 'रामहि सुमिरिअ' राम को स्मरो, जब मौका मिले, जब समय मिले। 'गाईअ रामहि।' राम को गाओ और 'संतत', सदा कथा का श्रवण का अनुसन्धान रखो। सुने हुए को गुनगुनाओ। यही तो सार है। और तुलसी कहते हैं, अपने अंतिम अनुभव को प्रस्तुत करते हैं कि राम सिमरन से किसको गति नहीं मिली?

तो, गोस्वामीजी ने भी 'रामचरित मानस' को विराम दिया। चार परमाचार्यों ने अपने-अपने श्रोताओं के सन्मुख कथा को विराम दिया। आज इन सभी आचार्यों की आशीर्वादक छांया में बैठकर मेरी व्यासपीठ इस गोवा प्रदेश में, इस स्थान में नव दिन के लिए मुख़र हुई। हम कथा को विराम देने की ओर अग्रसर है तब यजमान परिवार की श्रद्धा और सद्भाव और जिन लोगों ने इस आयोजन में बहुत श्रद्धा के साथ इस प्रेमयज्ञ में अपनी आहूतियां डाली है। मैं व्यासपीठ से सब तरह से मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। 'मानस हनुमानचालीसा' भाग-१० बहुत प्रसन्नता के साथ विराम ले रही है। मैं फिर एक बार प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। मेरे देश के युवान, और समस्त विश्व के युवान भाई-बहन की अध्यात्म और सत्संग के प्रति जो रुचि उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है, उसका स्वागत करता हूं। और ये जो युवानी आयोजन करती है, सद्भाव के साथ और कथा सुनती है। सुनती है और सुनने के बाद जितना आत्मसात् किया जाय वो सूत्र ग्रहण भी करती है। मुझे लगता है कि मेरा बीज़ बहुत शुद्ध है, विफल नहीं जायेगा। मेरे पास बीज की जो संपदा है वो बिलकुल स्वदेशी है। ये हाईब्रीड़ नहीं है! तो, ये बीज सफल होता दिखाई दे रहा है, ऐसा मेरी आंखों का दर्शन है। मेरे पास भी कई लोग आते हैं, 'बापू, आप को नेत्रयज्ञ कराना चाहिए!' इतना काम तू कर! मैं नेत्रों को साफ़ करने का काम करता हूं। ये नेत्रयज्ञ नहीं तो क्या है? दृष्टि शुद्ध करने का ये यज्ञ है कि आदमी की विचारधारा शुद्ध हो। आदमी की दृष्टि शुद्ध हो। और कोई आदेश नहीं, कोई उपदेश नहीं, केवल कुछ बोला हूं इसमें कुछ संदेश आप को लगता हो, और तुम्हारे नाम लगता हो तो वे डाक आप ले जाईयेगा। आप पढ़ियेगा। इससे प्रेरणा प्राप्त करिगा। मेरा बोलना सफल, आप का सुनना सफल। और इस नव दिवसीय प्रेमयज्ञ 'मानस-हनुमानचालीसा' भाग-१० का जो सुक्रित इकठ्ठा होता है वो हम श्री हनुमानजी महाराज के चरणों में समर्पित करते हैं, 'हे परमदाता हनुमंत, तूने राम-रसायन दिया था उसमें से एक अंजलि तेरे चरणों में समर्पित कर देते हैं।' पुन: एक बार मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हुआ इस प्रदेश की, जन-जन की, आप सबकी, पूरे संसार की प्रसन्नता, संपन्नता और प्रपन्नता के लिए हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना करते हुए मैं मेरी वाणी को विराम देता हूं।

राम-रसायन उसके पास रहेगा और उसके पास से हमें प्राप्त होगा जो रघुपति का दास होगा। रघुपति के दास तो हम सब हैं। लेकिन बहुत महत्त्व का यहां शब्द है 'सदा।' जो सदा दास होगा वो राम-रसायन का मालिक होगा। हमारी और आप की स्थिति ये है, हम दास तो है, हम किंकर है, हम सेवक है, सदा नहीं होते हैं! सदा दास होना एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। हम किसीके शरण में प्रपन्न तो हैं, कायम नहीं है। बहुधा हमारी प्रपन्नता ऐसी होती है कि जब तक हमारी इच्छा को सन्मान मिले, जब तक हमारी आशा की पूर्ति हो, हम तुम्हारी शरण में है। हमारी इच्छा को सन्मान न मिला, हमारी आशा पूर्ति नहीं हुई तो फिर ठीक नहीं है!

मानस-मुशायरा

तलब दीदार की है तो नज़रें जमाये रखना।
नकाब हो कि नसीब कभी तो सरक जायेगा।
-गालिब

जुदा रखा है अब तक हमको इस आश ने फराज़।
कभी तो मोजिज़ा होगा और आप हमें मिल जायेंगे।
- अहमद फ़राज

मुझ को इस राह पर चलना ही नहीं,
जो मुझे तुझ से जुदा करती है।
-परवीन शाकिर

ऊंगलियां यूं न सब पर उठाया करो।
खर्च करने से पहले कमाया करो।

•

शाम के बाद जब तुम सहर देख लो,
कुछ फ़किरों को खाना खिलाया करो।
- राहत इन्दौरी

फांसले ओर मुंह चढ़ाये रहते हैं,
मैं जब कभी दूरियां मिटाता हूं।
आप जिस पर यकीन रखते हो,
वो सख्स कौन है, बताता हूं।

कवचिदन्यतोऽपि

'रामचरित मानस' में राम का प्रीतिरस, शिव का ध्यानरस और रावण का महारस है

'संस्कृत-सत्र' के समापन प्रसंग पर मोरारिबापू का प्रेरक प्रवचन

'संस्कृत-सत्र-२०१५' में तीन दिनों से रसमीमांसा को लेकर बहुत अच्छी चर्चा हुई। प्रतिवर्ष के क्रमानुसार ऋषिपंचमी के दिन ऋषितुल्य आदरणीय भट्टसाहब को वाचस्पति एवोर्ड मिलने पर प्रणाम कर रहे हैं तब मैं बहुत आदर के साथ भट्टसाहब को प्रणाम करता हूं।

'वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।' भट्टसाहब ने व्याख्यान के आरंभ में तुलसी के 'रामचरित मानस' के प्रथम सोपान में प्रथम मंत्र का उल्लेख किया है। जिसमें से 'रसानां' शब्द लेकर तुलसी ने अपने 'रामचरित मानस' में साहित्य के नौ रसों का वर्णन अत्र-तत्र किया है। भोजन के षडरसों का वर्णन किया है। तुलसी का ग्रन्थ गुरुकृपा से जितना समझ में आए उतना समझकर निजानंद से घूम रहा हूं। उस ग्रन्थ से मुझे जितने रस प्राप्त हुए इसकी बात करनी है। मुझे लम्बा प्रवचन नहीं करना है। यहां तो मैं हमेशा श्रोतारूप में ही रहता हूं। वेद से लेकर रसमीमांसा यहां हुई; उसमें तुलसी कहां है? व्हेर इज़ तुलसी? मैं थोडी अंग्रेजी भी बोलूंगा!

'रामचरित मानस' में आप को स्पष्टरूप से तीन जगह नौ रस मिलेंगे। मैं तलगाजरडा की ओर से आमंत्रण देता हूं कि आप अवलोकन कीजिए। निसर्ग आहीर ने अद्भुत रस का वर्णन कल किया। शायद पता नहीं उन्होंने किया है; 'श्रीमद् भागवत्' में कहा गया है कि कंस की सभा में भगवान श्रीकृष्ण और बलभद्र प्रवेश करते हैं तब नौ रसों का प्रतिपादन हुआ है। आज गौतमभाई पटेल ने भी इस मंत्र के साथ कहा। ऐसा ही वर्णन थोड़े परिवर्तन के साथ तुलसीदासजी ने भगवान राम जनक की रंगभूमि में प्रवेश करते हैं तब किया है।

जिन्ह कें रही भावना जैसी।
प्रभु मूरति तिन्ह देखी वैसी।।

मैं रस के नाम के साथ आमंत्रण देता हूं। भाषा का ग्रन्थ है। आप अवलोकन कीजिएगा। वीर, भयानक, शृंगार रस का नाम, इन सभी नौ रसों के नाम लेकर तुलसीदासजी ने बहुत ही स्पष्ट प्रतिपादन किया है। पर तुलसी मर्यादासर्जक है, कवि है। उन्हें 'रामचरित मानस' में काफ़ी मर्यादा में रहना पड़ा है। तुलसी के इतर ग्रन्थों को खोलकर देखें तो एक सर्जक के रूप की स्वतंत्रता मुखरित है। एक सर्जक कितना स्वतंत्र होना चाहिए? कितना निर्भय होना चाहिए? नेपाल साम्राज्य को ठुकरा देने की बात कही गई यही सर्जक की शक्ति है। हनुमानजी को मेरी प्रार्थना है कि बाप, मेरे देश में किसी भी सर्जक को राज्याश्रित, धर्माश्रित न होने देना। धनपति के आश्रय में मत रखना। वे अपनी स्वतंत्रता सदा अक्षुण्ण रखे। उसके प्रति अपना प्रणम्य भाव अचल रहे। तुलसी ने अपनी सर्जनशीलता में काफ़ी स्वतंत्रता ली है। मैं तो कहता हूं, 'स्त्रीणां स्मरो मूर्तिमान्।' एक परमहंस बोला है। व्यास तो लिख गए हैं, बोले हैं शुकदेव। महापुरुष बोले हैं, मैं निर्गुण में विहार करता हूं। इस उत्तम श्लोक ने मुझे विमोहित कर दिया है। इस ऋण में डूब चुका हूं। मुझे अकस्मात हुआ है। इसका ज़ख्म कभी भी न मरे। मैं कभी भी स्वस्थ न बनूं। ऐसे एक परमहंस शुकदेवजी बोलते हैं। 'स्त्रीणां स्मरो मूर्तिमान्।' भगवान श्रीकृष्ण ने प्रवेश किया तब मथुरा की स्त्रियों को मनवत् दिखाई दिया। तुलसी ने 'मानस' में मर्यादा रखी है। जब राम ने रंगभूमि में प्रवेश किया तब रंगभूमि में मैथिली स्त्रियों ने राम के दर्शन किए। तब तुलसी लिखते हैं, 'निज निज रुचि अनुरूप।' साहब, उनमें कन्याएं भी थी। उन्होंने राम को स्वरुचि अनुसार देखा होगा। समवयस्काएं भी थी। उन्होंने राम को कैसे देखा होगा? उनमें वृद्ध मैथिली महिलाएं भी रही होगी। अत: तुलसी समर्यादा सुंदर शब्द प्रयोग करते हैं, 'निज निज रुचि अनुरूप।' कालिदास की तरह मुखर नहीं है क्योंकि उन्हें कुष्टरोगी नहीं, इष्टरोगी होना था। कालिदास कुष्टरोग के भोग हुए है ना? 'कुमार संभव' में जो प्रकरण खोले हैं। हीरालाल ठक्करबापा, 'कर्म का सिद्धांत' लिख गए कि मैं 'भागवत' कथा कहूं तब जिसे उल्टी करनी है वे आख़िर में बैठे। क्योंकि बस में जिसे उल्टी आती हैं वे आख़िर में बैठते हैं। ऐसा साफ़-साफ़ कह देते थे। कालिदास लिखते हैं-

कदा कान्तागारे परिमलमिलत्पुष्पशयने
शयान: श्यामाया: कुचयुगमहं वक्षसि वहन् ।
अयि स्निग्धे मुग्धे चपलनयने चन्द्रवदने
प्रसीदेत्याक्रोशन् निमिषमिव नेष्यामि दिवसान् ।

मेरे आख़िरी दिन ऐसा बोलते-बोलते खत्म हो जाय। तुलसी मर्यादा से कहते हैं, 'निज निज रुचि अनुरूप।' यहां नौ रस का अवतरण तुलसी ने 'भागवत' प्रसाद से किया है। मैं जरा भी गलत प्रतिपादन नहीं करूंगा। तुलसी ने जहां से लिया है वह मुझे कहना चाहिए। अभी बडौदा में मुझे नरसिंह महेता पर बोलना था तब मैंने कहा कि नरसिंह मेहता तुलसी से छ:सौ वर्ष पूर्व हो गए। तुलसी ने अठारह सूत्र इस पुत्री को न जानते हुए भी, गुजराती को न जानते हुए भी उन्होंने पुत्री में से ये सूत्र 'मानस' में लिखे होंगे। मैं तो 'वैष्णव जन तो तेने कहीए' को वैश्विक वैष्णव की 'गीता' कहता हूं। यह सांप्रदायिक वैष्णव नहीं, वैश्विक वैष्णव है। इनकी 'भगवत गीता' है। आप तुलसी में सभी सूत्र स्पष्टरूप से, भाषांतररूप में देख सकते हैं। तुलसी में संकीर्णता नहीं है। उन्हें तो जहां से भी मिला 'आनो भद्रा

क्रतवो'...जहां से मिले सद्वचन लिए। 'रामचरित मानस' में नौ रसों का वर्णन रंगभूमि में है, वह 'भागवत' में से थोड़े तुलसी ने स्वभावानुसार जिसका चित्रण करना है, जिसका नायक है, उनका जो इष्ट है उसके शील को ध्यान में रखते हुए उसका उन्होंने अनुशीलन किया है साहब!

दूसरा प्रसंग; मेरे महादेव जब ब्याहने चले या तो तुलसी ने उनको नंदी पर चढ़ाया; घोडे पर बिठाया ऐसा नहीं। घोडे पर तो जीव बैठता है शिव की धर्मसवारी होती है। धर्मरूपा नंदी पर शिवजी सवार हुए-

सिवहि संभु गन करहिं सिंगारा ।
जटा मुकुट अहि मौरु सँवारा ।।
कुंडल कंकन पहिरे ब्याला ।
तन बिभूति पट केहरि छाला ।।
ससि ललाट सुंदर सिर गंगा ।
नयन तीनि उपबीत भुजंगा ।।
गरल कंठ उर नर सिर माला ।
असिव बेष सिवधाम कृपाला ।।

बीभत्स, हास्य, अद्भुत, वीर, भयानक, रौद्र, करुण, शृंगार पूरे नौ रस है। गरीब के आंगन में आधे खुले, आधे ढ़के परिवार की क्षमतानुसार और वे बच्चे स्वच्छंद होकर खेल रहे हो। यों ये नौ रस खेलते हैं। मेरे शिव जब नंदी पर सवार हुए तब शिव ने नौ रस दिखाए। तीसरा प्रसंग; तुलसी जब भगवान राम के रूप का वर्णन करते हैं कई जगह पर तब उन्होंने नौ रस की स्थापना की। रामकथा की इतनी बड़ी विशालता है। भले 'महाभारत' जितने पन्ने नहीं है। अधिक संख्या के पन्नों से निर्णय नहीं होता। विशालता कितनी बड़ी है! 'भक्ति रसामृत सिंधु' अद्वैत के परमपूर्वाश्रमी उपासक या तो उनका पूर्वजीवन; वह जो जब भक्ति में डूब जाए; मधुसूदन सरस्वती महोदय, तुलसी की विशालता को नापते हैं। अपने हस्ताक्षर में व्यक्त करते हैं कि तुलसी कौन है? तीन स्थान पर स्पष्ट है; बाकी अत्र-तत्र नौ रस है। कौशल्या का राम, कुलदेवता श्रीरंग को नैवेद्य धरते हैं। माँ को बैष्णवी रीति अनुसार ऐसा लगा कि ठाकोरजी को अर्पण करने की कोई सामग्री बाकी तो नहीं रह गई है न? रसोईघर में देखने गई और लौटकर ठाकोरजी के निज मंदिर में देखा कि राम पलने के बदले भोजन करते हुए दिखाई पड़े! यहां राम अद्भुत है! तुलसी रस का नाम लिखते हैं, 'अद्भुतरूपं अखंडः' यों एक-एक रास्ता यों ही मिलता रहेगा। साहब! ढूंढना पड़े! पर मिल जाए। इसमें भोजन के छः रस है। मैं एक बार बोलनेवाला हूं, 'मानस-रसो वै सः।' यहां काफ़ी पाथेय मिला है। इसका स्वीकार कर बोलूंगा। पर एक बार 'मानस-रसो वै सः' करना है। 'मानस' का ठाकोर कौन है? इस बारे में कल से ही मेरा मन निश्चित हो गया है। यार! कितनी सामग्री मिल गई है! हमारे कांसे में कितना आटा आ गया है! अब मैं अपने तरीके से रोटी बनाउंगा। टुकडे में टुकडा कर देना', उसे मैं बांटूंगा। मेरे मन में संकल्प हुआ कि मैं बोलूंगा। तुलसी का रस शास्त्र से भरपूर है। किसी जगह शृंगार तो कहीं बीभत्स, कहीं यह, कहीं वह सभी रस है। मुझे जो कहना है वह अब कहता हूं। तो आप कहेंगे, अब तक जो कहा वह क्या था? अल्लाह जाने! क्योंकि जो कहना चाहे वह कहा नहीं जाता। इमरोज़ की नज़म याद आती है-

मैं जब भी उसे मिलता हूं,
तो मुझे वो एक अनलिखी नज़म नज़र आती है।
मैं उस अनलिखी नज़म को रोज लिखता हूं।
मगर इस अनलिखी नज़म को लिख नहीं पाता!

परोक्ष-अपरोक्ष रूप से लिखा हो, न लिखा गया हो, आत्मसात् हुआ हो, न हुआ हो ऐसी अनलिखी अनुभूति को कैसे अभिव्यक्त करे? मैं विशेषरूप से कहूं तो तुलसी ने 'रामचरित मानस' में ये नौ रस और छः रस-षटरस; ऐसे पंद्रह हुए। रस तो मूल आठ ही थे। फ़िर नौवां शांत रस आया जो भक्ति रस है। तुलसी ने तीन रस और जोड़े हैं। उसमें एक रस के अधिष्ठाता शिव है। एक रस के अधिष्ठाता राम है। और एक रस का अधिष्ठाता शिव का चेला रावण है। पूर्णांक अठारह हुआ। यों रस तो नौ ही होना चाहिए। नौ का अंक हमने पूर्ण माना है। पर्याप्त है। पर अन्य तीन रस-एक शिव ने; दूसरा राम ने; तीसरा रावण द्वारा। रावण बहुत रसिक था यह तो आप कबूलेंगे न? मीमांसा एक और रख दीजिए। रावण रसिक आदमी था। कैसे ठाठ थे! उसकी तो बात ही जाने दीजिए यार!

लेख ब्रह्मा लखे पूछीपूछी अने,
हुकम लीधा पछी वायु वाता।

कवि काग लिखते हैं कि जिसे पूछ-पूछ कर ब्रह्मा लिखे और जिसका हुकम हो! हम स्वीच ओन करे तो ए. सी. चालु हो और स्वीच ओफ करे तो बंद हो जाय। उसी तरह रावण के हुकम से वायु बहे और ना कहने पर बंद हो जाय! यह था उसका वैभव और ठाटबाट! 'रामचरित मानस' में उसे 'महारस' कहा है। भट्टसाहब, मैं आप से बहुत सीखा हूं। एक बात मुझे बहुत अच्छी लगी कि पर्याय नहीं, सगोत्र। नमन साहब! पर्याय शब्द नहीं या तो उन्होंने 'अमरकोश' से कितने पर्याय को भी सगोत्र कहा है। रावण के महारस के पर्याय शब्द काफ़ी है। अब तो मैं कथा में भी सगोत्र कहूंगा। कुछेक वस्तु का स्वीकार बहुत कठिन है। स्वीकार करना जो सीख जाय उसे साधु होते देर नहीं लगती। स्वीकार साधुता का बड़ा लक्षण है। महारस के सगोत्र शब्द कितने ही हो सकते हैं। ग्रन्थों में भी मिल सकता है। पर रावण का यह रस 'मानस' में मैंने अनुभव किया है।

अस कौतुक करि राम सर प्रबिसेउ आइ निषंग ।
रावन सभा ससंक सब देखि महा रसभंग ।।

विलास में डूबा रावण! किन्नर और गंधर्व राह देख रहे थे कि अखाड़े में महाराजा दशानन आ चुके हैं? हां, आ गए हैं। सभी किन्नर और गंधर्व नीचे उतरे हैं। अप्सराएं उतरी हैं। फ़िर रस का सैलाब आया है। भगवान राम सामनेवाले शिखर पर उदासी का व्रत लेकर बैठे हैं। उन्होंने सब देखा, दाद तो देनी चाहिए! राम भी अंदर से तो 'रसो वै सः' है न! रावण के यहां इतना रसमहोत्सव जम गया है। दाद कैसे दे? कोई अच्छा शे'र कहे तो 'दुबारा, वाह साहब, मुकरर!' कल यह निसर्ग 'वाह, वाह' कहता था। पर राम किस तरह दाद दे? साहब, संगीत शुरू हुआ। फ़िर भगवान वाणी से दाद दे तो वहां वाणी सुनाई ही न पड़े। यह इस पहाड़ी पर, वह उस पहाड़ी पर! वाणी सुनाई न पड़े। अतः राघव ने अपने निषंग में से बाण निकाला है। मैं अपनी दाद वाणी से नहीं, बाण से दूं। बाण फेंका। रावण समझ गया यह बाण किसका है। महारस भंग हुआ। दाद अधिक हो तो रसभंग होता है। 'अरे भाई, क्या बात है!' बरबाद जूनागढ़ी! वे पांच मिनट तक दाद देते रहे। उन्हें पकड़ने पड़े! शायद वही महारस रावण को महासमाधि की ओर ले जाए। तो आगे की नरलीला रद्द हो जाए! अतः 'कीन्ह महा रस भंग।' उस महारस में थोड़ा विक्षेप हुआ। रावण का रस है। मेरी व्यासपीठ गुरुकृपा से और आप सब की शुभकामना से यह 'रसो वै सः' से उपर जायेगी तब शायद मेरे चित्त में जो आयेगा वह कहूंगा।

राम के रस का नाम 'सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं।' हे जानकी, हे प्रिया, केवल मेरा मन ही प्रेमतत्त्व जानता है।

तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा ।
जानत प्रिया एकु मनु मोरा ।।
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं ।

यह मन तो मेरे पास नहीं है। क्या उपाय है? कहे-

जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं ।

मैं प्रीतिरस को इतने में समझता हूं। वह था राम का प्रीतिरस। उसे आप ने भक्तिरस कहा। नरसिंह मेहता ने 'प्रेमरस पाने तूं मोर ना पिच्छघर...'कहा। किसीने प्रेमरस कहा। किसीने कोई रस कहा। मेरी समझ और गुरुकृपा से राम का रस प्रीतिरस है।

अब शंकर का रस। शंकर का एक रस है, वो-

मगन ध्यान रस दंड जुग पुनि मन बाहेर कीन्ह ।
रघुपति चरित महेस तब हरषित बरनै लीन्ह ।।

शिवजी ध्यानरस में डूबे। मेरा पसंददीदा शब्द है जो तुलसी ने शिव के रस का नामकरण किया 'ध्यानरस।' ध्यान आदमी को लकड़े जैसा कर देता है। अचल कर देता है। चित्तवृत्ति निरोध की बात अद्भुत है। शिव का ध्यान

शुष्क नहीं, रसपूर्ण है। हम सब रसमार्गी है। मैं तो वैसे ही मार्गी हूं। हम मार्गी साधु है। मैं इसमें से बहुत पाता हूं। हृदय की बातें पाता हूं। इसमें ज्यादा नाक नहीं घूसेडना चाहिए। यार, छलांग लगाओ। उस रस में गोता लगा देना। भगवान शंकर का ध्यान रस है। रस के साथ ध्यान चाहिए। जिसका ध्यान रस है उसे गुस्सा नहीं आता। जिसके पास मौनरस हो उसे गुस्सा नहीं आता। जिसके पास सत्यरस हो उसे गुस्सा नहीं आता। रसहीन चिढ़ते हैं! क्योंकि रस नहीं। घन हो गए हैं! हमारे यहां कितना सुंदर नाम है भरत! भरत ने पूरे शास्त्र को मथ डाला है। ढ़ाई दिनों में यहां कितना मंथन हुआ! नवनीत निकला। रसमीमांसा सूक्ष्म दृष्टि से विस्तार से हुई। लेकिन फ़िर नरसिंह मेहता सहयोग करते हैं-

प्रेमरस पाने तुं मोर ना पिच्छधर!
तत्त्वनुं टूंपणुं तुच्छ लागे;
दूबळा ढोरनुं कूशके मन चळे,
चतुरधा मुक्ति तेओ न मागे।

ध्यानरस शंकरदत्त रस है। मेरी मति अनुसार 'रामचरित मानस' में ये तीन रस आये हैं। फ़िर वात्सल्य आया। पूरा जगत रसमय है। यहां पानी में गोता लगाइए। फ़िर H_2O, H_2O, H_2O न करें। प्यास लगे तो पी ले। तैरना हो तो तैर ले। ढ़बढ़बना हो तब ढ़ब ले। सीधे तैरना हो तो तैर ले। पैर ऊंच-नीच कर तैर ले; या डूबना हो तो डूब भी जाय। बाकी वहां H_2O, H_2O, H_2O यार! उस तत्त्व का अपमान नहीं करता। नरसिंह नागर है साहब, नागर। मेरी व्यक्तिगत दृष्टि से नागर व्यक्ति या समाज का नाम नहीं है। एक विचार का नाम है। साहब, नागर एक विचार है। कोई सुंदर बोले तो भी 'रामायण' में नागर कहा है। सुंदर बोले तो 'जयति वचन रचना अति नागर', मेरे राम नागर है। 'जयति वचन अति नागर', नरसिंह मेहता ज्ञाति से बहिष्कृत हुए उसका मतलब क्या? इसमें उनका क्या नुकशान हुआ? जो आदमी ऐसा कहे कि 'एवा रे अमे एवा रे..' ऐसा कहकर हाथ ऊपर उठाकर कहे 'करना हो सो कर लो!'

एवा रे अमे एवा रे एवा, वळी तमे कहो छो तेवा रे;
भक्ति करता जो भ्रष्ट कहेशो तो करशुं दामोदरनी सेवा रे।

मेरी समझ में है कि नागर में इतनी ताकत नहीं कि नरसिंह को नात से बाहर निकाल दे। विचार वैष्णवी का त्याग न कर सके। यह तो परम वैष्णवी अवतरित हुई थी। 'रामायण' में लिखा है 'बुद्धिप्रेरक सिव।' शिव बुद्धि को प्रेरित करते हैं। हाटकेश्वर महादेव ने नागर को ऐसी बुद्धि दी कि आप सब इसे बहिष्कृत कर दीजिए। यह पिंड ज्ञाति-बिरादरी में समा सके ऐसा नहीं है।

न मे मृत्युशंका न मे जातिभेदः ।

यह परमतत्त्व प्राप्त मानव है। अतः बहिष्कृत हुआ है। बाकी यह ऐसा नहीं कि बहिष्कृत हो जाय! इसे बांध नहीं सकते। पकड़ में नहीं आ सकता। यह सब से बिलग हो चुका है। 'प्रेम रस पाने...' तत्त्व की टीका नहीं करता। तत्त्व का प्रतिपादन कर कहता है-

ज्यां लगी आत्मातत्त्व चीन्यो नहीं,
त्यां लगी साधना सर्व झूठी।

नरसिंह मेहता रस और तत्त्व का आनंद लेते थे।

मैं इतना ही कहता हूं कि राम का प्रीतिरस, शिव का ध्यान रस और रावण का महारस। यह 'रामचरित मानस' में मुझे मेरी दृष्टि से दिखाई दिया। आख़िर में ईतना ही कहता हूं भीग जाइए, गोता लगाइए, पी लीजिए। वर्ना पागल हो जाय! एक राजा को ऐसी बिमारी हुई कि ठीक न हो पाए। भगवानजीबापा यह दृष्टांत देते थे। मंत्री से कहा, अब क्या करें? मंत्री ने कहा, एक ही बात हो सकती है। उसका मत सब जगह से विक्षिप्त होता है, लेकिन शतरंज में अभी भी लगा हुआ है! इनके साथ कोई शतरंज खेले तो यह ठीक हो जाय। शतरंज का खिलाड़ी आया। राजा के साथ एक साल खेला। राजा ठीक हो गया पर वह पागल हो गया!

('संस्कृत-सत्र-२०१५' में महुवा (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक १८-०९-२०१५)

सांध्य-प्रस्तुति

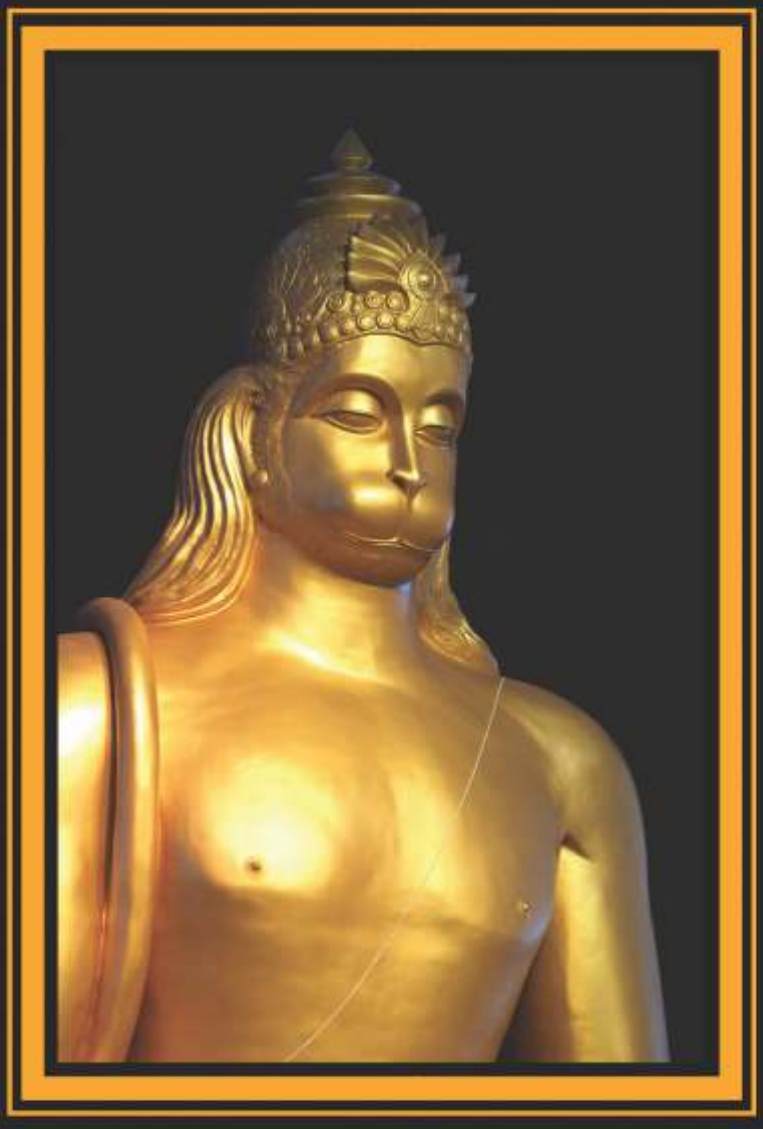

।। जय सीयाराम ।।